श्रद्धा-बीज

आचार्य सम्राट श्री देवेन्द्र मुनि जी म.सा.

श्रद्धा-बीज

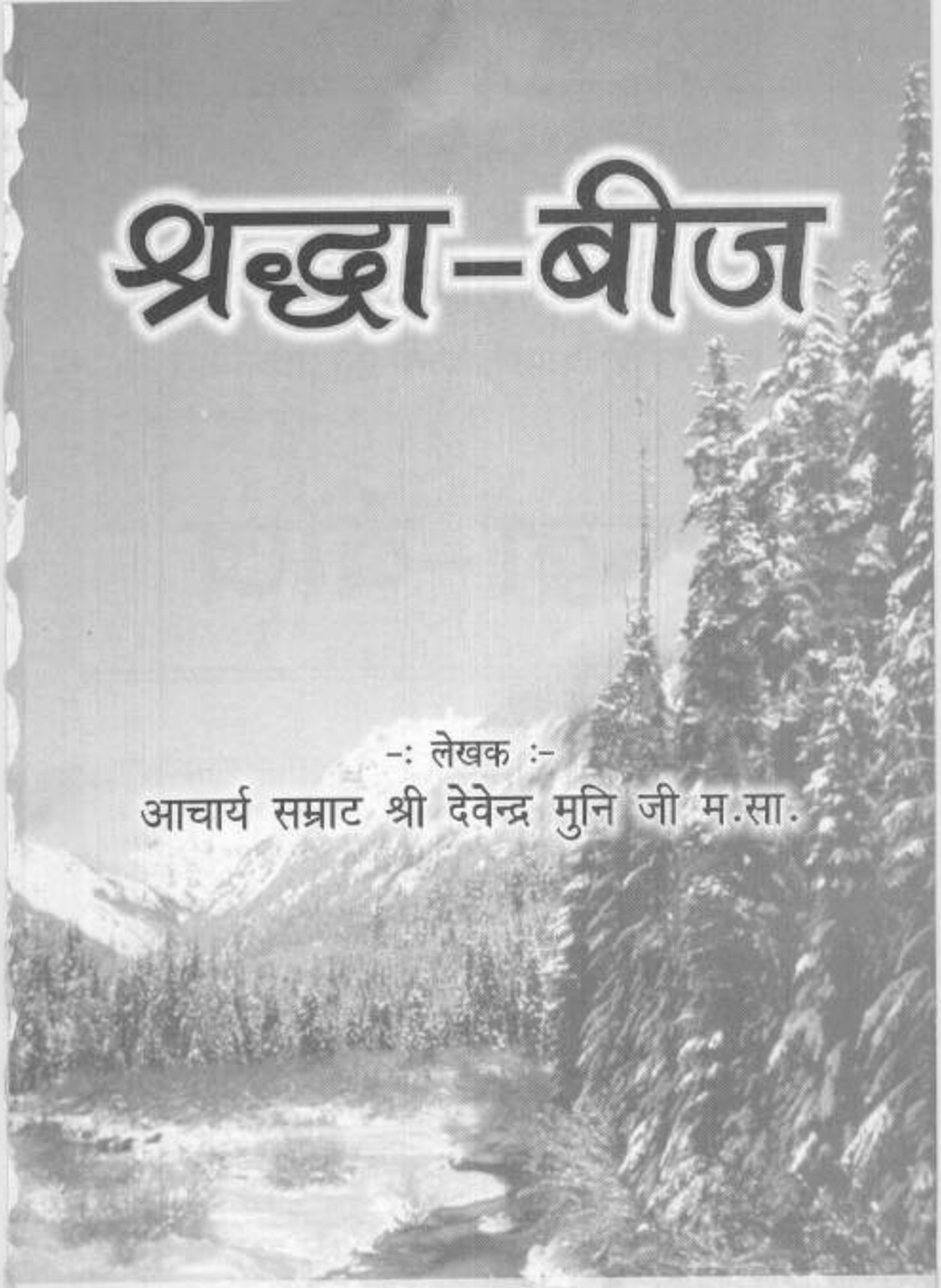

-: लेखक :-
आचार्य सम्राट श्री देवेन्द्र मुनि जी म.सा.

प्रकाशक
श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय
गुरु पुष्कर मार्ग, उदयपुर – 313001

जैन धर्म दिवाकर आचार्य सम्राट पूज्य

श्री देवेन्द्र मुनि जी म.सा.

की 73 वीं जन्म जयन्ती पर प्रकाशित

श्रद्धा-बीज

लेखक
आचार्य सम्राट
श्री देवेन्द्र मुनि जी म.सा.

प्रेरणा
साध्वी रत्न महासती
श्री पुष्पवती जी म.सा.
श्री दिनेश मुनि जी

प्रकाशक
श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय
गुरु पुष्कर मार्ग, शास्त्री सर्कल उदयपुर – 313001
फोन : 0294–2413518

प्रथम प्रवेश 2003

मूल्य
30/–

मुद्रक : चौधरी ऑफसेट प्रा.लि. उदयपुर फोन : 0294–2584071

प्रकाशकीय

साहित्य के रसिक पाठकों के कर कमलों में "श्रद्धा बीज" उपन्यास समर्पित करते हुए मन आनन्द विभोर है। बंकचूल एक युवराज है जो राजमहलों में जन्मा और पला लेकिन कुसंगति के कारण उसके जीवन में चोरी करना शराब पीना आदि अनेक दुर्गुण आ गये थे। पिता तथा माता द्वारा अनेक बार समझाने पर भी वह नहीं समझता है। उस की बहिन तथा धर्म पत्नी भी उसे समझाने का पूरा प्रयत्न करती है। पर युवराज नहीं मानता है और राजमहल छोड़कर चोर पल्ली में चला जाता है। कालांतर में वहां का मालिक बन जाता है।

एकदा मुनिवर का चोर चल्ली में आगमन होता है और वहाँ उनका चातुर्मास होता है उनके द्वारा उसे चार नियम करवाए जाते हैं। उन नियमों का वह पूरा पालन करता है और उसके जीवन में किस प्रकार आमूलचूल परिवर्तन हो जाता है यह अपनी यशस्वी लेखनी द्वारा अभिव्यक्ति दी है कलम के जादूगर जन–जन की श्रद्धा के केन्द्र महामहीम आचार्य सम्राट पूज्य श्री देवेन्द्र मुनि जी म. ने।

आचार्य सम्राट का विपुल साहित्य संस्था द्वारा प्रकाशित हुआ है तथा उसका सर्वत्र स्वागत हुआ है तथा उसकी अत्यधिक

मांग रही है। इसी का सुफल है कि कितने ही प्रकाशनों के अनेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

आचार्य सम्राट का साहित्य हिन्दी गुजराती, मराठी, अंग्रेजी, पंजाबी आदि अनेक भाषाओं में प्रकाशित हुआ है। अनेक विश्व विद्यालयों के पाठ्य व सहायक ग्रन्थों में भी उसे सम्मिलित किया गया है।

हमारी संस्था पर साधना के शिखर पुरूष विश्व सन्त पूज्य गुरुदेव उपाध्याय श्री पुष्कर मुनि जी म. एवं पूज्य गुरुदेव आचार्य सम्राट श्री सम्राट श्री देवेन्द्र मुनि जी म. का पूर्ण आर्शीवाद रहा है। जिस के फलस्वरूप हम साहित्य के क्षेत्र में एक कीर्तिमान स्थापित कर सके हैं।

आचार्य भगवन्त की ज्येष्ठ भगिनी परम विदुषी साध्वी रत्न महासती श्री पुष्पवती जी. म. आचार्य श्री के अन्तेवासी शिष्य श्री दिनेश मुनि जी म. के मार्गदर्शन में हम साहित्य का सुन्दरतम प्रकाशन श्री द्वीपेन्द्र मुनि जी मं. श्री पुष्पेन्द्र मुनि जी म. की सतत् प्रेरणा से कर पा रहे हैं।

आचार्य भगवन्त के साहित्य की अनेक पांडुलिपियाँ हमारे पास सुरक्षित पड़ी हैं। समय पर उनका प्रकाशन भी करने की हमारी योजना है।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में परम गुरुभक्त श्री रूपराज जी भण्डारी बाली। बम्बई ने गुरु भक्ति से प्रेरित होकर सहयोग प्रदान किया है यह उनकी गुरु भक्ति श्रुत सेवा प्रशंसनीय है।

पाठकगण इस पुस्तक का स्वाध्याय कर अपने जीवन को धन्य बनाएँगे ऐसी मंगल मनीषा।

वीरेन्द्र डांगी
मंत्री,
श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय, उदयपुर

स्वकथ्य

संकल्प और श्रद्धा में अद्‌भुत शक्ति है। संकल्प बल से देवता खिंचे आते हैं भगवान् दौड़कर भक्त के दरवाजे पर आ जाते हैं। संकल्प बल के समक्ष असम्भव कुछ नहीं है। गाँधीजी कहते थे – "संकल्प एक गढ़ (किला) के समान है। जो भयंकर प्रलोभनों से हमको बचाता है। दुर्बल और डाँवाडोल होने से हमारी रक्षा करता है।"

किसी शक्तिशाली राष्ट्र को जीतने या विकास के पथ पर अग्रसर करने के लिए विशाल सेना, भयंकर शस्त्र और अकूत धन की अपेक्षा राष्ट्र का दृढ़ संकल्प अधिक कारगर होता है।

हम जिसे संकल्प कहते हैं, उसे मन का दृढ़ विश्वास, आस्था, श्रद्धा, व्रत, नियम और प्रतिज्ञा भी कह सकते हैं।

श्रद्धा हमारे मन की वह डोर है, जिससे बंधकर हम भवसागर को भी पार कर जाते हैं। भगवान् महावीर ने कहा है –

सद्धा खमं णे विणइत्तु रागं–

श्रद्धा मनुष्य को राग, आसक्ति, मोह और दुर्बलताओं से मुक्ति दिलाती है। श्रद्धा जीवन दीपक का तैल है। श्रद्धा जीवन की कृषि का बीज है। तथागत बुद्ध कहते हैं

श्रद्धा बीजं तपो वुट्ठि –

श्रद्धा का बीज खेत में होगा तो तप की वृष्टि फसल पैदा कर देगी। यदि खेत में श्रद्धा का बीज ही नहीं होगा तो चाहे जितनी खाद, पानी डाल लो कुछ नहीं होगा। गीत में भी कहा है–

श्रद्धा वाँल्लभते ज्ञानं –

श्रद्धाशील व्यक्ति ही ज्ञान का अधिकारी होता है। धर्म, नियम, तप, व्रत सबके मूल में श्रद्धा है। श्रद्धा होने पर ही नियम और व्रत सफल होते हैं। इसी कारण प्रस्तुत उपन्यास का नाम मैंने **'श्रद्धा–बीज'** रखा है।

भारतीय संस्कृति में व्रत, नियम और प्रतिज्ञा की परम्परा है। संकल्प बल को पवित्र और सुदृढ़ करने के लिए यह एक अभ्यास विधि है, एक साधना है। इसीलिए अध्यात्म जगत में कहा जाता है व्रत करो! नियम लो! नियम या व्रत तुम्हारा बन्धन नहीं, किन्तु रक्षक है। प्रतिकूल परिस्थितियों में जब मन डाँवाडोल होता है, विचलित हो उठता है, 'करूँ या नहीं करूँ, इस ऊहापोह में झूलने लगता है। तब नियम, व्रत हमारा सहायक बनकर उस डाँवाडोल अवस्था में हमें सहारा देता है, दृढ़ रखता है और अपने लिए हुए व्रत पर स्थिर रहने का साहस जगाता है।

भारतीय साहित्य में व्रत या नियम की महिमा बताने वाले अनेक आख्यान व उदाहरण प्रसिद्ध हैं। जैन कथा साहित्य में तो व्रत निष्ठा पर सैंकड़ों दृष्टान्त

सुनाये जाते हैं। ग्रन्थों में पढ़ जाते हैं। व्रत में दृढ़ रहने वालों की समय–समय पर परीक्षा भी होती है। इस अग्नि–परीक्षा में जो कच्चे मोम के गोले की तरह पिघल जाते हैं उनका कोई इतिहास नहीं बनता, न ही कहीं उल्लेख होता है। परन्तु जो सोने की तरह परीक्षा की आग में पकड़कर भी चमकते हैं, सीमेंट की तरह परीक्षाओं का पानी पड़ने और अधिक मजबूत होते हैं, उनका नाम इतिहास में अमर होता है। साहित्य में लिखा जाता है और दूसरों के लिए मार्ग दर्शक प्रेरणाप्रद होता है।

'व्रत निष्ठा' के सम्बन्ध में जैन साहित्य में 'बंकचूल' का कथनक बहुत प्रसिद्ध है। इसका महत्व इसलिए भी अधिक है कि एक चौर्य कर्म करने वाला अपराधी मनोवृत्ति का राजकुमार भी जब मुनिराज के समक्ष एक छोटा–सा व्रत या नियम ले लेता है तो वह अपनी जान जोखिम में डालकर भी उस छोटे से नियम की रक्षा करता है। प्राणों से भी अधिक महत्व देता है, नियम को। नियम की रक्षा के लिए वह अपने प्राणों की परवाह नहीं करता है। प्राणों से भी अधिक महत्व देता है, नियम को। नियम की रक्षा के लिए वह अपने प्राणों की परवाह नहीं करता। हाँ, नियम या व्रत परीक्षा जरूर लेता है। जो इस परीक्षा में सफल होता है, वह व्रत के फलस्वरूप सभी प्रकार के सुख, सौभाग्य को प्राप्त करता है।

प्रस्तुत कथानक में व्रत और नियम निष्ठा का चमत्कार प्रत्यक्ष दिखाया गया है। 'बंकचूल' में अन्य सभी दुर्गुण थे, चोरी, मद्य–सेवन, परस्त्रीगमन, हिंसा आदि। किन्तु उसने मुनि के समक्ष एक छोटा–सा नियम ले लिया। उसी नियम ने उसे हिंसा, चोरी, मद्यपान, परस्त्रीगमणन सेवन आदि सभी दुर्व्यसनों से धीरे–धीरे मुक्त करा दिया और एक पतित–दुराचारी आततायी पुरुष को देव पुरुष बना दिया।

व्रत निष्ठा के महत्व पर बंकचूल का चरित्र बहुत प्रेरक है। प्राकृत और संस्कृत भाषा में इस पर आचार्यों ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। गुजराती और राजस्थानी भाषा में भी इस चरित्र पर अनेक रचनाएँ मिलती हैं। मैं प्रवचनों में अनेक बार बंकचूल का दृष्टान्त सुनाता हूँ, श्रोताओं के मन में इसको सुनकर प्रेरणा और प्रोत्साहन जगता है। इस चरित्र में प्रेरकता भी है और रोचकता भी है।

पूज्य बहन महाराज साध्वी रत्न पुष्पवती जी म.सा. की प्रेरणा रही कि इस रोचक चरित्र पर उपन्यास शैली में कुछ लिखूँ। समय निकालकर मैंने उनके आग्रह को पुस्तक रूप दिया है। शिष्य श्री दिनेश मुनिजी की सेवा–शुश्रुषा व विनय भावना के कारण दूसरे व्यस्त कार्यों के बीच भी मैंने लेखन का समय निकाला और इसे 'श्रद्धा बीज' के नाम से प्रस्तुत किया है।

जिस प्रकार शरीर में प्राण होने पर ही उसका श्रृंगार शोभित होता है, दीपक में तैल होने पर ही वह प्रकाश देता है। इसी प्रकार व्रत और नियम में श्रद्धा होने पर ही वह श्रेष्ठ फलदायक होता है। श्रद्धा बीज में पाठक यही सब कुछ पढ़ेंगे कि एक दृढ़ श्रद्धा में अडिग संकल्प बल ने, पापात्मा को धर्मात्मा कैसे बना दिया! अस्तु .....

– आचार्य देवेन्द्र मुनि

1

प्राचीन समय का कलिंग देश छोटे–छोटे राज्यों में बँटा था। जैसे आज के युग में भारत देश उसके प्रान्तों में बँटा है और हर प्रदेश या प्रान्त का अपना स्वतंत्र शासन और स्वतंत्र शासक है, उसी तरह कलिंग देश में भी छोटे–बड़े पन्द्रह राज्य थे। उन्हीं राज्यों में धनपुरी का राज्य भी था।

धनपुरी सुन्दर नगरी थी। आस–पास घने जंगल और पहाड़ियाँ थीं। जंगलों–वनों के मध्य से दूसरे राज्यों में जाने के लिए वन मार्ग भी थे।

धनपुरी में सभी वर्ग के लोग रहते थे। ऐसी बात नहीं थी कि वहाँ के लोग सेठ–साहूकार, व्यापारी और धनवान ही थे। निर्धन और मजदूर भी रहते थे। इस नगरी में वीणा निर्माण का एक मुख्य कुटीर उद्योग था। घर–घर वीणाएँ बनाई जाती थीं। यहाँ की वीणाएँ बहुत दूर–दूर तक जाती थीं। वीणा पर सुन्दर रंग–बिरंगी चित्रकारी देखकर किसी का भी मन मुग्ध हो जाता था। देवी सरस्वती भी वीणावादिनी है। नारद जी भी वीणा लिये ही विचरण करते हैं, फिर भी आज के युग में अनेकों प्रकार के वाद्य हैं। लेकिन उन दिनों वीणा वाद्य ही मुख्य वाद्य था। तब तबले का आविष्कार भी नहीं हो पाया था। तबले की जगह मृदंग का प्रयोग होता था। जो भी हो, वीणा निर्माण कला के कारण धनपुरी समृद्ध थी। दूसरा लघु उद्योग वस्त्र बुनने का भी था।

रेशमी और सूती वस्त्रों के निर्माण में यहाँ के कारीगर कुशल थे। इन दोनों उद्योगों के कारण नगरी के हर हाथ को काम मिलता था और दूर–दूर के व्यापारी आते थे। जहाँ उद्योग होता है वहाँ समृद्धि भी आती है– *"व्यापारे वसति लक्ष्मी"* :– लक्ष्मी का निवास उद्योग–व्यापार में रहता है।

इसके अलावा नगरी का क्रय–विक्रय व्यापार भी समृद्ध था। यहाँ के व्यापरी अपना सार्थ लेकर दूसरे देशों को जाते थे। धनी–मानी श्रेष्ठियों और व्यापारियों का बहुत बड़ा वर्ग रहता था।

यहाँ के नगर सेठ थे – धनमित्र। धनमित्र विपुल सम्पत्ति के स्वामी थे। वे अपने धन से छोटे व्यापारियों को भी सहयोग देते थे।

धनपुरी के राजा थे विमलयश। राजा विमलयश नीति परायण, न्यायप्रिय और प्रजावत्सल राजा थे। इनकी रानी का नाम था देवदत्ता। देवदत्ता सुन्दर और गुणवती नारी थी। राजा के राजसिंहासन पर बैठने के पाँच वर्ष बाद रानी देवदत्ता ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया था। पुत्र का नाम पुष्पचूल रखा गया। पुष्पचूल माता–पिता को तो प्रिय था ही, प्रजाजनों की भी एक आशा था। उत्तराधिकारी या युवराज के अभाव में प्रजा को निराशा रहती है। पर अब सब इसलिए प्रसन्न थे कि युवराज पुष्पचूल उनके भावी शासक के रूप में बहुत कम प्रतीक्षा के बाद मिल गया था।

पुष्पचूल के जन्म के पाँच वर्ष बाद राजा विमलयश एक पुत्री के पिता भी बन गये। राजपुत्री का नाम श्रीसुन्दरी रखा गया। इस तरह राजपरिवार के में चार प्राणी थे – राजा विमलयश, रानी देवदत्ता और पुत्र पुष्पचूल तथा पुत्री श्रीसुन्दरी।

समय के साथ राजपुत्र और राजपुत्री बढ़ते गये और उनकी शिक्षा भी होने लगी।

रानी देवदत्ता एक माता के साथ योग्य शिक्षक और गुरुणी भी थी। उसने अपनी सन्तान को सर्वप्रथम विनय और धर्म के संस्कार दिये। प्रातः उठते ही माता–पिता को प्रणाम करना। नमोकार मंत्र का जप करके फिर दिनचर्या का प्रारम्भ करना। उसके बाद स्नान आदि से निवृत्त होकर जिन–दर्शन, गुरु–दर्शन करना, वन्दन करना और उसके बाद अन्य कामों में लगना।

इन संस्कारों ने दोनों ही भाई–बहन के भीतर श्रद्धा और सद्धर्म का बीज बो दिया। एक ओर राजपुत्री पढ़–लिखकर योग्य बन रही थी तो दूसरी ओर युवराज पुष्पचूल भी शस्त्र–शास्त्र की विद्या में निपुण हो रहा था। अश्वारोहण में तो वह कमाल ही करता था। पहाड़ियों पर घोड़े को सरपट–सपाट राजमार्ग की तरह दौड़ाने, तलवार चलाने, भाला फेंकने और धनुर्विद्या में भी वह निपुण था। उसने बहत्तर कलाएँ पढ़ीं।

जब राजकुमार 16 वर्ष का हुआ तो एकाएक उसके जीवन में एक परिवर्तन आ गया। घर–परिवार में धार्मिक वातावरण होते हुए भी पूर्व जन्म के कुछ ऐसे संस्कार भी थे जो उसमें प्रकट होने लगे। उसकी रुचि और रुझान उन बातों की ओर बढ़ने लगा, जिन्हें समाज और शास्त्र – दोनों त्याज्य मानते हैं। हर संस्कार का एक उदयकाल होता है और किसी न किसी निमित्त से संस्कार जागृत हो जाता है। कुछ तो पूर्व जन्म के संस्कार और कुछ ऐसे दुष्ट प्रभाव वाले मित्रों की संगति, इस कारण पुष्पचूल में जुआ खेलने और चोरी करने के दो दुर्गुण भी थे।

एक दिन राजकुमार पुष्पचूल घोड़े पर सवार होकर जंगल पहुँचा। घोड़े को पेड़ से बाँधकर उसी पेड़ के नीचे विश्राम करने लगा। उसी वृक्ष के पास कौशल नाम का चोर एक वृक्ष–मूल के पास गड्ढा खोदकर चोरी के आभूषण दबा रहा था। इस सुनसान स्थान पर कोई आता जाता नहीं था। कौशल ने युवराज पुष्पचूल को देखा और पुष्पचूल ने कौशल को। दोनों एक दूसरे को न जानते थे और न पहचानते थे। कौशल ने पुष्पचूल को राहगीर ही समझा। पास आकर बोला –

"यह स्थान तो वन मार्ग से हटकर पूर्ण निरापद है। इधर भूलकर भी कोई राहगीर नहीं आता। मार्ग छोड़कर तुम यहाँ कैसे आ गये? अब आ ही गये तो चोरी के इस धन में तुम्हारा भी हिस्सा है। हम चोरों की भी एक आचार संहिता होती है। चोर होकर भी चोर बँटवारे में बड़े ईमानदार होते हैं। चोरी करते समय या चोरी का धन छिपाते समय यदि हमें कोई व्यक्ति मिल जाता है तो हम उसे अपना साथी मानकर चोरी के धन में–से हिस्सा देते हैं। तुमने ये आभूषण गाड़ते समय मुझे देख लिया है तो अब इसमें तुम्हारा हिस्सा रख दिया है।"

"तुम्हारी आचार संहिता के अनुसार मैं तुम्हारा साथी बन गया" राजकुमार पुष्पचूल ने कौशल से कहा– लेकिन मैं तो तुम्हारा स्थायी साथी बनना चाहता हूँ।"

"ऐसा नहीं हो सकता।" कौशल ने कहा – "अपना हिस्सा लो और अपनी राह पकड़ो। पूरी छान–बीन किये बिना मैं तुम्हें अपना

स्थायी साथी कैसे बना सकता हूँ ? फिर यह काम हरेक के बस का नहीं। इसमें बड़े खतरे हैं। पकड़े जाने पर जनसमूह मारने टूट पड़ता है। फिर राजा भी कठोर दण्ड देता है। वर्षों पहले मैं पकड़ा गया था तो पचास कोड़ों की मार पड़ी और छह महीने का कारावास मिला।"

"फिर भी मुझ जैसा साथी पाकर तुम गर्व का अनुभव करोगे।" पुष्पचूल ने कहा – "जानते हो, मैं कौन हूँ। मैं राजा विमलयश का पुत्र धनपुरी का युवराज पुष्पचूल हूँ।"

"तुम और युवराज!" कौशल भयभीत हो गया। फिर बोला – "तुम मुझे पकड़वाकर दण्ड तो नहीं दिलवाओगे; फिर, तुम तो हमारे भावी नरेश हो। तुम हमारे साथ चोरी कैसे कर सकते हो?"

"अरे भाई, चोरी को न तो मैं पाप मानता हूँ और न अपराध।" पुष्पचूल ने कहा– "पाप का दण्ड परलोक में मिलता है और अपराध का दण्ड इसी लोक में राजा देता है। मैं चोरी को एक कला मानता हूँ। इसीलिए मैं तुम्हारे साथ चोरी करूँगा। मेरे रहते तुमको आरक्षियों का भी डर नहीं रहेगा। मेरे निजी कक्ष में ऐसा गुप्त द्वार भी है कि उसमें से होकर मैं चोरी का धन अपने महल के भू–गृह में छिपा सकता हूँ।"

"युवराज पुष्पचूल, मेरे–तुम्हारे विचार एकदम मिलते हैं।" कौशल ने कहा – "मैं भी चोरी को एक कला मानता हूँ। साहस, बल, चतुराई, बुद्धिमानी, निर्भीकता और सहने की शक्ति – इतना सब जिसमें हो, वही इस कला की कलाकारी जानता है। फिर मैं तो चोरी को न्याय भी मानता हूँ। धनी लोग काफी धन एकत्र करके दूसरों को धनहीन बना देते हैं। धनवानों का धन निर्धनों के पास आये, यह न्याय नहीं तो क्या है? चोरी ही एक ऐसा साधन है, जिससे धनवानों का धन अपना बनाया जा सकता है।"

"मैं तुम्हारी हर बात से सहमत हूँ।" पुष्पचूल ने कहा – "अब तो मुझे अपना साथी बनाओगे?"

"साथी ही नहीं, नायक हो तुम हमारे" कौशल ने कहा – "हम चार साथी हैं। पाँचवें तुम, हम चारों के सरदार, मुखिया या नायक रहोगे। हम चारों तुम्हारी आज्ञा में रहेंगे। तुम्हें पाकर हम निर्भय रहेंगे।"

इसके बाद कौशल पुष्पचूल को अपने अड्डे पर ले गया। एक पहाड़ी गुफा में चोरों का अड्डा था। उसके तीन अन्य साथी हरिभद्र, महापद और विक्रम थे। ये तीनों मदिरापान करते हुए जुआ खेल रहे थे। पुष्पचूल और कौशल ने भी मदिरापान किया और जुआ खेलने बैठ गया। उसने अपने कण्ठहार को दाँव पर लगाया था। वह पहला दाँव जीत गया और उसने एक सौ स्वर्ण मुद्राएँ जीतीं। फिर उसने कहा –

"अब मैं चलूँगा। जुए से भी धन खूब आता है। जुए में हारते हैं तो चोरी में भी पकड़े जाते हैं। लाभ–हानि तो दोनों ओर है।"

"संसार में हर क्षेत्र में जुआ है" महापद ने कहा "व्यापार भी तो जुआ है। उसमें भी कभी घाटा तो कभी लाभ होता है।"

"अब मैं नित्य आया करूँगा।" पुष्पचूल ने कहा–"यहीं बैठकर योजना बनाकर चोरियाँ करेंगे। मैं भी साथ रहा करूँगा।"

इस तरह राजकुमार पुष्पचूल के कुसंस्कारों के बीज प्रकट होकर धीरे–धीरे वृक्ष बनने लग गये। वह चोरी करने के साथ पक्का जुआरी भी बन गया। मदिरापान वह करता ही था। कुछ ही दिनों बाद वह परस्त्री/वेश्यागामी भी बन गया। संसार में जो अपने सन्मार्ग से गिर जाता है वह फिर गिरता ही जाता है। तभी तो कहा है – ***विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातो शतमुखः***– विवेक भ्रष्ट सैकड़ों बार गिरता है।

लहसुन, प्याज खाया छिपता नहीं, इसी प्रकार दुर्गुण भी छिप नहीं सकता। राजा विमलयश के पास शिकायतें पहुँचने लगीं। नगरवीथियों में घूमकर पहरा लगाने वालों ने शिकायत की कि जब हम एक हवेली के पास खड़े 'जागते रहो' की आवाज दे रहे थे तो राजकुमार ने हमें झिड़क कर चुप कर दिया और कहा – कहीं जाकर बैठो या सो जाओ। बस हमारे हटने के बाद हवेली में चोरी हो गई। प्रायः ऐसा ही होता था। आरक्षी और पहरेदारों की बार–बार

शिकायत से इस बात की पुष्टि हो रही थी कि पुष्पचूल दुर्व्यसनों में फँस चुका है। कोषाध्यक्ष ने भी दबी जबान से कहा– "युवराज नित्य ही बहुत–सा धन ले जाते हैं।" महामंत्री ने भी राजा से कहा– पृथ्वीनाथ! मैं पूरी जानकारी करने के बाद कहता हूँ कि युवराज कामिनी नाम की नगरप्रिया के यहाँ जाते हैं। इतना ही नहीं, उन्होंने कामिनी को यह आश्वासन भी दिया है कि राजगद्दी पर बैठते ही मैं तुम्हें अपनी रानी बना लूँगा।"

बार–बार की इन खबरों से राजा विमलयश का सिर चकरा गया। वे चिन्ता में डूब गये। उन्होंने महारानी देवदत्ता से कहा :–

"महारानी, हमारे विमल वंश रूपी चन्द्रमा को राहु ने ग्रस लिया है। युवराज पुष्पचूल हमारा एकमात्र पुत्र है। वह हम दोनों की नहीं, पूरी प्रजा की आशा है। पुष्पचूल द्यूतक्रीड़ा, चोरी, मदिरापान और वेश्यागमन जैसे पापपूर्ण दुर्व्यसनों में फँस गया है। उसे अब तुम ही सुधार सकती हो। माता की बातों का प्रभाव पुत्र पर अधिक पड़ता है।"

"माता से अधिक प्रभाव पत्नी का पड़ता है।" रानी देवदत्ता ने कहा– "आप पुष्पचूल का विवाह कर दीजिये। पत्नी के प्रेमबन्धन में बँधने के बाद वह सब बातें छोड़ देगा।"

"विवाह तो करना ही है।" राजा ने रानी से कहा – "फिर भी उसे सत्पथ पर लाने का प्रयास तो हमें करना ही चाहिए। आज रात को हम दोनों ही उसे समझायेंगे। पहले उसका सुधार हो, तब विवाह करना भी ठीक रहेगा। यदि ऐसा नहीं हो सका तो आने वाली पुत्रवधू भी दुःख उठायेगी।"कहीं ऐसा न हो, इसको सुधारा न जाये और एक सुकुमार मासूम कन्या का जन्म बिगाड़ दे।"

इस तरह बातें करते–करते राजा विमलयश युवराज पुष्पचूल के कक्ष में पहुँचे। वह वहाँ नहीं था। राजा ने उसके दास–दासियों को आदेश दिया कि युवराज आये तो हमारे कक्ष में भेज देना। लेकिन युवराज पुष्पचूल रात–रात भर गायब रहता था। प्रातःकाल भी घर न आकर अपने अड्डे पर ही सोता था। एक दिन राजा ने प्रातःकाल

ही उसे घेर लिया और उसे अपने कक्ष में ले जाकर समझाने लगे। राजा विमलयश ने उसे हर पहलू से समझाया, पर उसने सब बातों का एक ही उत्तर दिया –

"पिताजी, कुछ लोग अकारण ही मुझसे ईर्ष्या करते हैं। मेरे बारे में जो बातें आपने सुनी हैं, वे सब झूठ हैं। मैं ऐसा कुछ नहीं करता, जिससे आपको कभी लज्जित होना पड़े।"

"तुम पर लगाये जा रहे आरोप यदि झूठे हों तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी" राजा ने आगे कहा – "फिर तुम रात को कहाँ रहते हो? सवेरे भी कभी दिखाई नहीं देते। आज तो संयोग से मिले हो।"

"मुझे इस राज्य का शासन सम्हालना है। अतः मैं रात को घूम–घूमकर प्रजाजनों के बारे में जानकारी प्राप्त करता हूँ।"

"उस कार्य के लिए हमारे गुप्तचर काफी हैं। राजा ने राजकुमार से कहा–"तुम रात को घर पर ही सोया करो। प्रातःकाल जहाँ भी जाओ, हमसे मिलकर जाया करो।"

"जैसा आप कहेंगे, वैसा ही होगा" यह कहकर पुष्पचूल चला गया। अब वह रात को अपने कक्ष में ही सोता था। कक्ष के गुप्त द्वार में होकर रात को वह अपने साथियों से कह आया था कि पिताजी का विश्वास जीतने के लिए मुझे कुछ दिन घर पर ही रहना है।

अब राजा को भी विश्वास–सा हो गया कि पुष्पचूल सुधर गया है। अतः उन्होंने ध्यान देना कम कर दिया। पुष्पचूल अब पुनः चोरियाँ करने लगा। जुआ, मदिरापान और वेश्यागमन भी जारी था। राजा के पास पुनः शिकायतें आने लगीं, तो उन्होंने कोषाध्यक्ष से कहकर पुष्पचूल को मिलने वाला हाथ खर्च का धन भी बन्द करा दिया।

2

राजा विमलयश ने पुष्पचूल का जेब खर्च बन्द कर दिया तो उसने राज्य के कोषाध्यक्ष को धमकाया –

"एक न एक दिन मैं यहाँ का राजा बनूँगा तब तुम्हें इतना परेशान करूँगा कि तुम जीवन भर याद करोगे। अतः राजकोष से मुझे धन देना बन्द मत करो।"

"मैं राजाज्ञा से विवश हूँ।" कोषाध्यक्ष ने कहा – "मेरी राजभक्ति का पुरस्कार यदि यही है कि शासक बनने पर आप मुझे परेशान करें तो इसे मैं सहन कर लूँगा लेकिन राजाज्ञा का उल्लंघन करके मैं आपको एक मुद्रा भी नहीं दे सकता।"

पुष्पचूल की इस धमकी का कोषाध्यक्ष पर कोई प्रभाव नहीं हुआ तो निराश होकर वह अपने अड्डे (पर्वत गुफा) पर पहुँचा। कौशल, हरिभद्र, महापद और विक्रम – चारों चोर साथी अड्डे पर ही मिल गये। वे पुष्पचूल की ही प्रतीक्षा कर रहे थे। पुष्पचूल को परेशान देख हरिभद्र ने पूछा –

"आज आप परेशान दीख रहे हैं? क्या आपके पिताश्री महाराज विमलयश ने आपको प्रताड़ित किया है?"

"राज्य से मिलने वाला मेरा जेब खर्च बन्द हो गया है।"

युवराज ने कहा–"उसी धन से तो मैं जुआ खेलता था। मेरे लिए राजकोष के द्वार बन्द हो गये हैं।"

"चिन्ता की कोई बात नहीं है।" महापद बोला – " इस गुफा में चोरी के धन का जो कोष है, वह सब आपका ही है।"

"सो तो है, पर यहाँ का कोष कब तक चलेगा? अब मैं बड़ी–बड़ी चोरियाँ करके उस कोष की वृद्धि करूँगा।"

"यही तो हम भी चाहते हैं" कौशल बोला –"राज्य से मिलने वाले धन से आप निष्क्रिय – से हो गये थे। अब आपमें सक्रियता बढ़ेगी।"

"तो फिर राजकोष की चोरी ही कीजिए – विक्रम ने सुझाव दिया।

"राजकोष की चोरी में आप अच्छी तरह सफल भी हो जायेंगे।"

"तुम ठीक कहते हो विक्रम।" पुष्पचूल बोला– "अभी तक मैने उस और ध्यान ही नहीं दिया था। पहले मैं राजकोष की पूरी स्थिति, वहाँ की पहरेदारी आदि को अच्छी तरह चोरी की दृष्टि से देख लूँ। फिर मैं आप लोगों को साथ लेकर राजकोष का ही धन चुराऊँगा। इसके लिए मुझे एक–दो पहरेदार की जान भी लेनी पड़े तो पीछे नहीं हटूँगा।"

"एक काम और भी करना है।" महापद ने सुझाव दिया–"धन की एक–दो पेटी कोषाध्यक्ष के घर पहुँचा देंगे, जिससे चोरी का आरोप कोषाध्यक्ष पर ही लगेगा।"

"तुम्हारा सुझाव बहुत उत्तम है।" पुष्पचूल बोला–"बेचारा कोषाध्यक्ष बेमौत मरेगा।"

"तो फिर किस रात का कार्यक्रम है" कौशल ने पूछा – "क्या आज की रात?"

"तुमने सुना नहीं मैंने क्या कहा था?" पुष्पचूल बोला –"पहले मैं राजकोष की पूरी स्थिति और पहरेदारों की गतिविधि देख लूँ। उसके बाद मैं स्वयं राजकोष की चोरी करूँगा।" अब पहले मुझे मदिरा दो। उसके बाद आज की रात का कार्यक्रम बनायेंगे।"

पुष्पचूल अपने चारों साथियों के साथ मदिरापान करने लगा। दिनभर वहीं रहा। रात को ही पाँचों ने मिलकर तीन श्रेष्ठियों के यहाँ चोरी की। चोरी के धन में रजतमुद्रा, स्वर्णमुद्रा और कुछ रत्नजड़ित आभूषण थे। दूसरे दिन प्रातःकाल पूरी धनपुरी नगरी में बात फैल गई कि तीनों चोरियों में युवराज पुष्पचूल था। राजा विमलयश ने पुष्पचूल को भरी राजसभा में फटकारा –

"तुम अपनी आदतों से बाज नहीं आते। अगर मेरे दो–चार पुत्र होते तो मैं तुमको तुम्हारे हाल पर छोड़ देता। तुमको एक दिन इस राज्य का राजा बनना है। सही राह पर चलो। प्रजा को उचित अनुकरण दो। यथा राजा तथा प्रजा के अनुसार राजा ही प्रजा को अनुकरण देता है।"

"पिताजी, अगर मैं चोर हूँ और चोरियाँ करता हूँ तो आपके आरक्षी और पहरेदार मुझे रंगे हाथों पकड़ते क्यों नहीं?

"अगर तुमने चोरियाँ नहीं छोड़ी, तो आज नहीं तो कल पकड़े अवश्य जाओगे।" राजा विमलयश ने कहा – "एक–न–एक दिन हर चोर अवश्य पकड़ा जाता है। जिस दिन तुम पकड़े जाओगे, उस दिन तुमको कठोर से कठोर दण्ड दूँगा। फिर दण्ड तो मैं यहाँ दूँगा, लेकिन परलोक में तो तुमको नरक ही मिलेगा। संतो और शास्त्रों ने चोरी को महापाप कहा है।"

"चोरी पाप नहीं एक कला है।" पुष्पचूल ने कहा–"शास्त्रों में चौर्यकला का वर्णन है।"

"अरे पुष्पचूल, तू सदैव बंक, यानी टेढ़ा ही चलता है। तेरी हर बात बंक है। तू पाप को भी कला कहता है। आज से तू पुष्पचूल नहीं, **बंकचूल** है। मैं पूरी सभा में घोषणा करता हूँ कि आज से तुझे कोई पुष्पचूल नहीं कहेगा। याद रखना, बंकचूल! जिस दिन तेरे विरुद्ध एक भी प्रमाण मिलेगा, मैं तुझे ऐसा कड़ा दण्ड दूँगा कि दुनिया देखती रहेगी।

बंकचूल सभा से उठकर चला गया। राजा विमलयश ने राजसभा भंग कर दी और तुरन्त रनिवास में आये। पति की खिन्न मुद्रा को देखकर रानी देवदत्ता भी उदास हो गई। वह कुछ पूछती उससे पहले ही राजा ने कहा–

"महारानी! संकट की स्थिति में पत्नी का परामर्श बड़ा सहायक होता है। आपत्तिकाल में धीरज, धर्म, मित्र और पत्नी – ये चारों ही काम आते हैं। तुम बताओ मैं क्या करूँ? इस राज्य के लिए क्या कोई पुत्र गोद ले लूँ ? यह भी सम्भव नहीं, जिसके अपना आत्मज पुत्र हो, वह फिर दत्तक पुत्र की इच्छा क्यों रखें? एक–न–एक दिन श्रीसुन्दरी तो अपने घर चली जायेगी। इस बंकचूल का क्या होगा? चकराना नहीं, पुष्पचूल का नाम मैंनें बंकचूल रख दिया है? बंकचूल से मैं पूरी तरह निराश हो चुका हूँ।"

रानी देवदत्ता बोली –

"स्वामी, आपको निराश तो किसी भी स्थिति में नहीं होना चाहिए। आशा ही तो जीवन है। आशा प्रतीक्षा को बल देती है। हर रात के बाद दिन आता है। बंकचूल बहुत बुरा है। लेकिन इससे भी अधिक बुरा होने की भी तो सम्भावना है। यह एक अटल सिद्धान्त है कि बुरे से बुरे व्यक्ति में सुधरने की सम्भावनाएँ छिपी होती हैं। हर बुरा व्यक्ति सुधर जाता है, सुधर सकता है। जब तक अंधेरा है, रस्सी साँप दिख रही है। कभी न कभी अंधेरा हटेगा और रस्सी, रस्सी दिखेगी। आप निराश न हों।

"ये तो सिद्धान्त की और उपदेशों की बातें हैं।

राजा विमलयश बोले – "व्यावहारिक दृष्टि से विचार करो कि हमारे राजवंश में राजपुत्र न होकर चोर जन्मा है। उसके लिए कुछ करने की बात कहो।"

"करना तो एक क्रिया है। करने से पहले जानना है। रानी ने कहा–"आपको जानना यह है कि माता–पिता तो जन्म देते हैं। कर्मों के संस्कार तो जीवात्मा के अपने होते हैं। हमारे पुत्र का यह भी तो एक कर्म था कि वह पुष्पचूल से बंकचूल हो गया। बंकचूल होना उसका कर्म संस्कार है। आप कर्मों के साथी तो नहीं हो सकते। फिर भी मैं समयानुकूल एक सुझाव देती हूँ। आप बंकचूल का विवाह कर दीजिए। इस बात की पूरी सम्भावना है कि पत्नी का प्रेम पाकर वह उसकी बात सुनेगा और सत्पथ पर आ जायेगा। पत्नी का परामर्श बढ़ा अमोघ होता है।"

"तुम भी तो मेरी पत्नी हो।' कहते–कहते राजा को हँसी आ गई–"तुम्हारा परामर्श भी मेरे लिए अमोघ है। मैं बंकचूल का विवाह करके तुम्हारे परामर्श को सम्मान दूँगा।"

पड़ौसी राज्य की कमला नाम की एक सुन्दर राजकुमारी थी। जितनी वह सुन्दर थी, उतनी ही गुणवती और सुलक्षणा थी। उसी के साथ राजा विमलयश ने अपने पुत्र बंकचूल का विवाह कर दिया। विवाह के बाद बंकचूल कई दिन तक पत्नी कमला के सान्निध्य में

ही रहा। राजा–रानी को भरोसा हो गया कि उनका पुत्र बंकचूल अब सही राह पर आ गया है। उधर कौशल, हरिभद्र, महापद और विक्रम चारों गुफा में बैठे परामर्श कर रहे थे।

कौशल ने कहा :–

"साथियों! बंकचूल हमारा नायक है। उसे पाकर हमारा उत्साह, साहस और बल तीनों बढ़े हैं। भविष्य में वही हमारा राजा है। आज ग्यारह दिन हो गये। वह अपनी नई पत्नी के प्रेम जाल में फँसकर रह गया है।"

"कुछ दिन प्रतीक्षा करो" विक्रम ने कहा – "एक दिन वह अवश्य आयेगा। तब हम ऐसा उपाय करेंगे कि उसकी पत्नी कमला की उसे उतनी आवश्यकता नहीं रहेगी, जितनी आज है।"

"क्या उपाय करोगे" कौशल ने पूछा तो विक्रम ने बताया–"अपने अड्डे पर सुन्दर लड़की लाकर रखेंगे। वह बंकचूल को अपने वाग्जाल, रूप–जाल और प्रेम–जाल तीनों जालों में फँसाने में निपुण होगी।"

एक दिन बंकचूल अपने अड्डे पर पहुँचा। दिनभर मदिरा पी और रात को एक सुन्दर वेश्या सुता के साथ रहा। उधर युवराज्ञी कमला रात भर बंकचूल की प्रतीक्षा करती रही। प्रातः होने से पूर्व जब थोड़ा–सा अंधेरा शेष था, बंकचूल घोड़े पर सवार होकर अपनी भवन वाटिका में पहुँचा और गुप्त द्वार से अपने महल में पहुँच गया। कमला शय्या छोड़कर नित्य कर्म के लिए चली गई थी। बंकचूल खाली शय्या पर लेट गया। रात भर का जागा था, सो उसे नींद आ गई। तभी कमला ने उसे जगाया और बोली :–

"प्रातःकाल हो रहा है। यह समय तो जागने का है। रातभर आप कहाँ रहे?"

"मुझे सो जाने दो। नींद आ रही है।" बंकचूल बोला–"सब बातें फिर बताऊँगा।"

पति को सोता छोड़कर कमला सास देवदत्ता और श्वसुर विमलयश के चरण छूने गई। उसने ननद श्रीसुन्दरी के भी पैर छुए। श्रीसुन्दरी ने कहा –

"भाभी! भैया कहाँ हैं? वे तुम्हारे साथ क्यों नहीं आये?"

"भैया की बात भैया से पूछो।" कमला ने हँसकर कहा – "भाभी से क्यों पूछती हो?"

"इसलिए पूछती हूँ कि भैया की प्रतिछाया भाभी होती है। अब तो भैया तुम्हारे हैं।"

"जब ननदोई आयेंगे तो तुम भी उनकी हो जाओगी।"

कमला ने कहा – "अब तुम्हारा विवाह जल्दी ही करना पड़ेगा।"

"तुम ननद–भाभी इसी तरह ठिठोली करती रहोगी तो मैं कब बोलूँगी?" महारानी देवदत्ता ने कहा– "मुझे भी तो कुछ पूछने दो"।

इतना कह महारानी देवदत्ता ने कमला से पूछा –

"बहू! क्या बंकचूल को तुमने समझाया है? वह तुम्हारी बात मानता है?"

"अभी तो वे मुझसे सब कुछ छिपाते हैं।" कमला ने कहा – "रात भर कहीं रहे हैं। अब आये हैं तो सो गये हैं। अभी ज्यादा कहूँगी तो चले जायेंगे। पहले मैं उनका विश्वास जीत लूँ। फिर वे अपनी कमियों को स्वयं स्वीकार करेंगे। तभी बातें करूँगी।

"माताजी, हर जीव में सत्य की धारणा का बीज होता है। सत्य की धारणा का अर्थ है – श्रद्धा। श्रद्धा या सत्य की धारणा का बीज समय पाकर अवश्य ही अंकुरित होता है। अभी तो वे असत्य को, सत्य को और पाप को धर्म समझे हुए हैं। जिस दिन श्रद्धा का बीज अंकुरित होगा, उस दिन उनके सभी भ्रम और सभी विपरीत निश्चय मिट जायेंगे।"

थोड़ी देर सास के पास बैठने के बाद कमला वाटिका में टहलने चली गई। बंकचूल अभी सो रहा था। भवन वाटिका में एक 'केलिसदन' बना हुआ था। कभी–कभी कमला और बंकचूल यहाँ रात बिताते थे।

दोपहर के बाद बंकचूल उठा, स्नानादि से निवृत होकर कमला के पास आया तो कमला ने बोला–

"आप भोजन कर लीजिए। मुझे बड़े जोरों से भूख लगी है।"

"तो तुमने अभी तक खाया क्यों नहीं?" बंकचूल ने पूछा–"मेरे कारण अभी तक भूखी बैठी हो?"

"आपसे पहले कभी खाया होता तो आज खा लेती।" कमला ने कहा– "अगर आपको मेरा तनिक भी ख्याल है तो समय से भोजन कर लिया करो। आप रात को जागते हैं और दिन में सोते हैं। रात सोने के लिए होती है। आप दूसरे के धन को लेने के लिए रात–रात भर जागते हो। क्या आपके पास धन की कमी है। कमी होने पर भी तो चोरी पाप है। आप तो शिक्षित हैं। क्या आप सत्य और अस्तेय की महिमा नहीं जानते?"

"मैं सत्य की महिमा जानता हूँ।" बंकचूल ने कहा – "पिताजी से डरता था, अतः उनके सामने सत्य नहीं बोल पाता था। तुमसे सत्य कहता हूँ कि मैं चोरियाँ करता हूँ।"

"आप अपनी ही प्रजा के धन की चोरी करते हैं?"

कमला ने कहा – "दूसरे चोर तो पराया धन चुराते हैं, पर आप कैसे चोर हैं, जो अपना ही धन चुराते हैं।"

"तुम तो कहती थी कि संसार में अपना कुछ है ही नहीं। यहाँ तक कि शरीर भी अपना नहीं।" बंकचूल ने कहा – "फिर यह धन भी मेरा अपना कैसे हो गया?"

"आप भी कहाँ की बात कहाँ जोड़ते हैं? कमला ने कहा – "संसार अनित्य है, नाशवान है, शरीर भी छूट जाता है। इसीलिए संतजन कहते हैं कि संसार में कुछ भी अपना नहीं, शरीर तक भी अपना नहीं। जीते जी धन का उपयोग है, उसका उपार्जन भी है। जो धन स्व–उपार्जित है, न्यायपूर्वक उपार्जित किया जाता है, वह अपना है। उसको देने या भोग करने का अधिकारी है। जो धन हमने कमाया ही नहीं, उसे लेने का हमें क्या अधिकार है?"

"मुझे भी धन की आवश्यकता नहीं है। मैं केवल धन के लिए चोरी नहीं करता, मुझे उसमें आनन्द आता है।" बंकचूल ने कहा– "चोरी करने के लिए रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ने, ऊपर से नीचे खिसकने, धन की पेटियाँ लेकर भागने में मुझे बड़ा आनन्द मिलता

है। चोरी में अदम्य साहस, बल और बुद्धि चातुर्य के उपयोग का अवसर मिलता है।"

"साहस–बल और बुद्धि चातुर्य का उपयोग मानवीय कार्यों में भी तो हो सकता है। किसी डूबते और जलते हुए को बचाने में तीनों गुणों की परीक्षा हो जाती है।" कमला कहती चली गई– आपकी सुबुद्धि में कुबुद्धि का वास हो गया है। आप तो पाप कर्म में लिप्त हैं।"

"तो तुम चोरी को पाप मानती हो?" बंकचूल ने कहा–"चोरी तो एक कला है। किसी भी कला में निपुणता प्राप्त करना दोष नहीं। मैं भी चौर्यकला में निपुणता बढ़ा रहा हूँ।"

"चोरी करने की क्रिया कला तब होती है, जब चोरी विनोद या मजाक में की जाती हो।" कमला ने कहा – "आप रात को धन चुरायें और सवेरे ड्योढ़ा करके लौटा दें, तो मैं समझूँ कि आप चोरी को कला मानते हैं। जो धन आपका है ही नहीं, जो पूर्णतः दूसरे का है, उसका हरण तो पूर्णतः पाप है।"

कुछ देर मौन रहने के बाद कमला ने पुनः कहा –

"स्वामी! आप तो स्वदार संतोषी भी नहीं हैं। पैसे के लिए तन बेचने वाली स्त्रियों से आप सम्पर्क रखते हैं। मेरे प्राणेश्वर! मेरी एक बात आप ध्यान से सुनिये और हमेशा के लिए गाँठ बाँध लीजिए। चोरी, जुआ, परस्त्रीगमन और मदिरापान–ये चारों पाप ऐसे महापाप हैं कि इनमें से एक पाप भी जीवन को दुःख और अशान्ति से भर देता है। चिन्ता और भय बढ़ाता है और फिर नरक में भी ले जाता है। फिर जो चारों पाप करता हो, उसे नरक जाने से कौन रोक पाया है?। एक बार को सूर्य पश्चिम में निकल सकता है, पर इन पापों में से एक भी पाप करने वाला जीवन में कभी सुखी और प्रसन्न नहीं रह सकता।" "कमला पाप–पुण्य की बातें डरपोक लोग सोचते हैं।"

बंकचूल ने कहा–"नरक तो मरने के बाद मिलेगा। नरक या स्वर्ग तो कल्पना की बातें हैं। प्रिये! तुम भी आज रसभंग करने पर तुली हो। अभी तो तुमको बड़े जोरों की भूख लग रही थी। अब कहाँ है

तुम्हारी भूख? दासी से कहो, यहीं दो थाल दे जायेगी, पहले भोजन करें, फिर मैं एक खास बात तुमसे कहूँगा।"

इतनी बातचीत के बाद कमला को लगा कि उसका पति उसकी बातें मान लेगा। काफी कड़ी बातें कहने पर भी बंकचूल बिगड़ा नहीं। उसने कमला की सभी बातें खुले मन से सुनी, न झुंझलाया और न नाराज हुआ। इसलिए कमला को लगा कि बंकचूल एक दिन उसकी बात मानेगा। कमला और बंकचूल दोनों ने भोजन किया। भोजन करने के बाद बंकचूल ने कहा–

"प्रिये! आज रात को यह शयनकक्ष खाली रखना। आज हम दोनों भवनवाटिका के 'केलिसदन' में रात बितायेंगे।"

"जैसा आप चाहेंगे, वैसा ही होगा।" कमला ने कहा– "मैं तो आपकी अनुगामिनी हूँ।"

"प्रिये! तुम दासियों से कहकर 'केलिसदन' में पुनः सजावट करा देना। अब मैं घोड़ा लेकर घूमने जाऊँगा।"

कमला ने भी उसे रूक जाने को नहीं कहा। बस, इतना ही पूछा कि रात को कब आओगे। जल्दी ही आऊँगा और रात को तुम्हारे साथ ही रहूँगा, यह कहते हुए बंकचूल शयनकक्ष से बाहर निकल गया। सीधा अपने अड्डे पर पहुँचा। उसके चारों साथी उसी का इंतजार करे रहे थे।

3

बंकचूल जब अपने अड्डे पर पहुँचा तो वह बैठ भी नहीं पाया था कि कौशल ने कहा –

"युवराज! अब तक तो आप राजकोष की स्थिति और पहरेदारों की गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर चुके होंगे।"

"पहले बैठने तो दो।" बंकचूल ने बैठते हुए कहा – "इस राज्य का युवराज होकर छोटी–मोटी चोरियाँ मुझे भी अच्छी नहीं लगतीं। लेकिन राजकोष की चोरी तो असम्भव है। हाँ, यदि शक्ति हो तो उसे लूटा जा सकता है। पर इतनी बड़ी शक्ति तो किसी राजा में ही हो सकती है, जो दूसरे राज्य पर आक्रमण करके वहाँ के राजकोष को लूटे।"

"आप ठीक कहते हैं युवराज।" महापद बोला – "हम अपना साहस चोरी में ही दिखा सकते हैं। डकैती या लूट हम नहीं कर सकते।"

"चोरी में भी क्या साहस दिखा सकते हैं?" हरिभद्र ने कहा – "जरा–सा पत्ता खटकते ही दिल धड़कने लगता है और सिर पर पाँव रख कर भागना पड़ता है।"

आज तुम मामूली–सी बातें कैसे करने लगे? विक्रम ने कहा–"जब युवराज हमारे साथ हैं तो भय कैसा?" कौशल ने कहा – "आज कोई बड़ी चोरी करने का इरादा था, पर युवराज ने तो यह कहकर निराश कर दिया कि राजकोष की चोरी असम्भव है।"

"मैंने ठीक कहा है कौशल।" बंकचूल ने कहा – "राजकोष भू–गृह के भीतर भी एक और तल गृह वहाँ बना है। उसके कपाट वज्र के हैं। पहली बात तो यह कि वहाँ तक पहुँचना ही असम्भव है। कपाट ऊपर ही हैं। फिर तीन दरवाजे और हैं, जिनके कपाट वज्र–सम हैं। चार द्वारों के वज्र–सम कपाटों को कई दिन तक तोड़ो, तो भी नहीं टूटेंगे। फिर पहरा हर समय का है। प्रत्येक पाँच घड़ी बाद पहरेदार बदल जाते हैं कोई भी पहरेदार असावधान नहीं रह सकता।"

"राजकोष का विचार ही छोड़ो।" विक्रम ने कहा– "मेरा एक सुझाव है। वह यह कि नगर सेठ धनमित्र का कोष भी तो राजकोष से कम नहीं है। क्यों न हम नगर सेठ के यहाँ चोरी करें?"

विक्रम की यह बात सुनते ही बंकचूल खुशी से उछल पड़ा और बोला –

"विक्रम तुम्हारा सुझाव तो बहुत अच्छा है। नगर सेठ के कोष तक मैं तुमको पहुँचा सकता हूँ। एक बार नगर सेठ धनमित्र ने पिताजी महाराज विमलयश को सपरिवार आमंत्रण दिया था। तब मैं बारह साल का था। पहले ही भू–गृह में नगर सेठ का कोष है। हमारा साथी महापद तो बड़े से बड़े ताले तोड़ देता है।"

"लेकिन पहरेदारी" कौशल ने पूछा – "नगर सेठ के यहाँ पहरेदार भी तो होंगे।"

"वह सब मैं जानता हूँ।" बंकचूल बोला – "वीथी का पहरेदार नगर सेठ के द्वार से हटकर जब वीथी का चक्कर लगाकर दुबारा लौटकर नगर सेठ के गृह द्वार तक आता है तो लगभग चार घड़ी का समय बीत जाता है। पहरेदारी की चार घड़ी की अनुपस्थिति हमारे लिए काफी है।

"बस अपने–अपने साधन सम्भालो।" कौशल ने कहा – "रेशम की रस्सी, ताला तोड़ने का यंत्र, सब तैयार रखो। अब तक की सबसे बड़ी चोरी नगर सेठ के यहाँ होगी।"

"मैं चलता हूँ।" बंकचूल ने कहा– "कमला के सो जाने पर मैं आधी रात के बाद नगर सेठ के घर के आस–पास मिलूँगा। तुम चारों वहीं पहुँचना।"

बंकचूल अपने अड्डे से लौटकर अपने महल में आ गया। कमला उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। कमला बड़ी प्रसन्नता से उठी और बोली –

"स्वामी, आज आप ठीक समय से आये हैं।"

"अब तो मैं समय से ही आया करूँगा।" बंकचूल ने कहा –

"तुम भवन वाटिका के लिए गृह में पहुँचकर दासियों से बातचीत करो। मैं थोड़ी देर में पहुँचता हूँ।"

यह कह बंकचूल अपने शयनकक्ष के एक पादपीठ पर बैठकर कुछ सोचने लगा।

युवराज बंकचूल का महल अलग था, जो बड़े राजमहल का ही एक भाग था। उसमें बड़े–बड़े बारह कक्ष, बरामदे और प्रांगण थे। सभी कक्ष सजे हुए थे। इन्हीं में से एक कक्ष युवराज बंकचूल और युवरानी कमला देवी का संयुक्त शयनकक्ष था। उसमें स्वर्ण के पायों का विशाल पलंग था। कई पादपीठ और मट्पीठ बैठने को थे। उसी कक्ष में होकर भवन वाटिका को जाने का द्वार था। भवन वाटिका में ही एक ऐसा गुप्त द्वार था, जहाँ होकर नगर में जाया जा सकता था। इस गुप्त द्वार की जानकारी कमला को नहीं थी।

थोड़ी देर बाद अपने शयनकक्ष में बैठकर अपनी योजना बनाने के बाद बंकचूल भवन वाटिका के केलिसदन में पहुँचा। वहाँ कमला के पास दो दासियाँ बैठी हुई थीं। राजकुमार को आते देख वे दोनों उठ गईं। कमला और बंकचूल थोड़ी देर बातें करते रहे। बंकचूल ने सोचा कि अगर इसी तरह बातें करते रहे तो कमला सोयेगी नहीं। यह सोच बंकचूल ने कहा – "मुझे तो नींद आ रही है। मैं तो सो रहा हूँ।" यह कह बंकचूल कपट नींद में सो गया। कुछ देर बाद कमला भी गहरी नींद में सो गई। कमला को एक बार जगाने का हलका–सा प्रयास करने के बाद बंकचूल ने जान लिया कि गहरी नींद में सोयी है तो गुप्त द्वार से होकर सीधा नगर सेठ धनमित्र की हवेली पर पहुँचा। वहाँ उसके चारों साथी भी मिल गये। साथियों ने उसे बताया कि पहरेदार अभी–अभी यहाँ से गया है। उसे दुबारा आने में चार घड़ी का समय लगेगा। तब तक हम अपना काम कर लेंगे। आप ठीक समय पर आये है।

सब गहरी नींद में सोये थे। नगर सेठ के खजाने के कपाट महापद ने खोल दिए। सबने एक–एक पेटी उठा ली। किसी में रत्न, किसी में स्वर्ण मुद्राएँ, तो किसी में आभूषण थे। किसमें क्या

था, यह किसी को पता नहीं था। पाँचों ने एक–एक पेटी उठा ली। जब ये लोग बाहर निकलने लगे तो भीतर से आवाज आई – कौन है? ये लोग भय से भागने लगे। भय के कारण दो पेटियाँ मार्ग में ही गिर गईं।

"तुम लोग अड्डे पर पहुँचो।" बंकचूल ने कहा – "मैं सवेरे आऊँगा।"

"लेकिन पेटियाँ लेकर कैसे भागें?" विक्रम ने कहा – "मार्ग लम्बा है।"

"मेरे तो जूते भी कहीं गिर गये।" बंकचूल ने कहा – "दो पेटियाँ तो मार्ग में ही गिर गईं। तीन ही तो बची हैं। दो मेरे पास रहने दो। बाकी एक लेकर भागो। तुम चार हो और पेटी तो एक ही है।"

विक्रम, महापद, हरिभद्र और कौशल गुफा की ओर भागे। बंकचूल गुप्त द्वार से अपने भवन में चला गया। वह सीधा अपने शयनकक्ष में गया। उसके बाद केलिसदन में गया तो कमला जाग गई थी। बंकचूल ने कहा–"क्या नींद उचट गई?"

"नहीं, अभी आँख खुली है।" कमला ने कहा – "मैं एक सपना देख रही थी। तुम कहाँ गये थे?"

"कहीं नहीं, मैं तनिक शयनकक्ष तक गया था" बंकचूल ने कहा "तुमने कैसा सपना देखा है?"

"आपको देश निकाला हो गया है।" कमला ने कहा –"आपके साथ मैं भी जाना चाहती थी कि आपने मुझे साथ नहीं लिया। मैं हठ कर रही थी कि मैं भी आपके साथ चलूँगी। आप स्वीकृति दे पाते, उससे पहले ही मेरी आँख खुल गई।"

"सपने तो सपने ही होते हैं, सपने की बातों पर क्या ध्यान देना।" बंकचूल ने कहा – "सो जाओ, मैं भी सोता हूँ।"

प्रातःकाल पूरी धनपुरी नगरी में तहलका मच गया कि नगर सेठ के यहाँ चोरी हो गई। सबकी जुबान पर यही बात थी कि यह चोरी तो युवराज बंकचूल ने ही की है। नगर सेठ के द्वार पर युवराज के पैर का एक जूता मिला है। यह इस बात का प्रमाण है कि युवराज

रात को वहाँ गये थे। नगर सेठ स्वयं राजा के पास आये और बोले:–

"आप तो युवराज के जूते पहचानते ही हैं। उनका एक जूता मेरे घर के द्वार पर मिला है और दूसरा कुछ आगे गली में पड़ा था। खजाने से पाँच पेटियाँ निकाली गई थीं, उनमें दो छूट गई। पक्की बात है कि युवराज अपने चार साथियों को लेकर गये होंगे और पाँचों एक–एक पेटी लेकर चले होंगे।"

"पृथ्वीनाथ! अब तो अनर्थ हो गया। महामंत्री चोरों की खोज में लगे हैं।"

"चोरों की खोज तो हो गई धनमित्र।" राजा विमलयश ने कहा – "अब तो प्रमाण की भी आवश्यकता नहीं है। तीन घड़ी बाद मैं दरबार बुलाने वाला हूँ। आज अपराधी दण्ड पाये बिना नहीं बचेगा। आज हमारी न्यायपरिषद् के सदस्य भी होंगे। सबकी सम्मति और सहमति से न्याय होगा, जिससे इतिहास यह न कहे कि पिता न्यायकर्ता न था और उसने अपने पुत्र के साथ पक्षपात किया।"

"लेकिन अधिक कठोरता भी उचित नहीं" नगर सेठ धनमित्र ने कहा – "न्याय करते समय यदि आपको क्रोध आ गया तो आप उचित दण्ड से अधिक दण्ड भी दे सकते हैं।"

"इसीलिए तो न्यायपरिषद् की सम्मति ली जाएगी।"

राजा ने कहा – "आप तीन घड़ी बाद राजसभा में आइए और बंकचूल को क्या दण्ड मिलता है, इसे स्वयं अपनी आँखों से देखिए।"

यथा समय राजसभा जुड़ी। न्यायपरिषद् के पाँचों सचिव यथा स्थान विराजमान थे। राजा विमलयश राजसिंहान पर बैठे थे। उनका न्याय युवराज बंकचूल को लेकर था, इसलिए सिंहासन के पृष्ठ भाग में बाईं ओर राजमहिषी के आसन पर महारानी देवदत्ता भी विराजमान थी। बंकचूल की बहिन श्रीसुन्दरी भी उपस्थित थी। प्रजाजनों की संख्या आज अधिक थी। अनेक गणयमान्य श्रेष्ठी विराजमान थे। नगर सेठ और राजपुरोहित अपने–अपने आसनों पर

विराजमान थे। दण्डाधिकारी भी उपस्थित थे। महामंत्री का आसन सूना था। वे नगर सेठ की चोरी करने वाले अन्य चोरों की खोज में लगे थे। मुख्य चोर बंकचूल का अपराध तो प्रमाणित हो ही गया था।

यथा समय कार्यवाई शुरू हुई। राजा विमलयश ने प्रतिहार को आदेश दिया कि बंकचूल को उपस्थित किया जाय। जब प्रतिहार बंकचूल के पास पहुँचा तो उसने आना–कानी की। तब प्रतिहार ने कहा – "महाराज की आज्ञा है कि आप अभी इसी समय मेरे साथ चलें।" बंकचूल सभा में पहुँचा तो उसे अपराधियों की जगह खड़ा होने को कहा। फिर महाराज विमलयश ने बंकचूल से पूछा–

"बंकचूल! श्रीमन्त नगर सेठ धनमित्र के यहाँ चोरी हुई और उस चोरी में तुम्हारी भूमिका मुख्य थी।"

"क्या नगर सेठ के यहाँ चोरी हो गई?" अनजान बनते हुए बंकचूल ने कहा – "मेरे लिए तो यह नया संवाद है।"

"अनजान मत बनो।" राजा ने कहा – " मैं प्रमाण प्रस्तुत करूँगा। अच्छा है तुम अपना अपराध स्वीकार कर लो।"

"जो अपराध मैंने किया ही नहीं, उसे स्वीकार कैसे कर लूँ।" बंकचूल बड़ी ढिठाई से बोला – "मैं तो रात को महल से बाहर ही नहीं निकला। आप कमला से जानकारी कर लीजिए कि मैं रात भर उसी के पास रहा।"

"यह भी तो सम्भव है कि जब कमला सो रही हो, तब तुम चोरी करने गये हो और चोरी करके उसके पास आ गये हो।" महाराज विमलयश ने कहा– "उस बेचारी को यही लगा कि तुम उसके पास हो।"

"अब आप मेरे रात भर घर रहने के प्रमाण को ही नहीं मानते तो मैं क्या करूँ? बंकचूल ने कहा – "आप कमला से पूछ तो लीजिए"

"कमला से भी पूछूँगा।" राजा ने कहा – "जब तुम घर से बाहर गये ही नहीं तो तुम्हारे पैर का जूता नगर सेठ के गृहद्वार पर कैसे पहुँचा।"

राजा के संकेत से एक सेवक ने बंकचूल का जूता उसके सामने रख दिया। फिर राजा ने गरजकर कहा–

"क्या यह जूता तुम्हारा नहीं है? यह जूता वहाँ कैसे पहुँचा? दूसरा जूता मार्ग में पड़ा मिला है। क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि नगर सेठ के यहाँ तुम रात चोरी करने गये और भागते समय हड़बड़ी में तुम्हारा एक जूता नगर सेठ की हवेली के दरवाजे पर गिर गया?"

"यह सब मेरे विरुद्ध षड्यंत्र है।" बंकचूल बोला– "कोई मेरा विरोधी मेरे जूतों को लेकर नगर सेठ के दरवाजे पर डाल आया है। फिर ऐसे जूते और लोग भी तो पहनते हैं।"

"इधर–उधर की व्यर्थ की बातें मत करो।" राजा ने कहा – "इस बात की पक्की जानकारी कर ली गई है कि यह जूता तुम्हारा ही है। अगर तुम अपना अपराध स्वीकार कर लोगे तो तुम्हारे दण्ड में कुछ कमी हो सकती है।"

बंकचूल ने स्पष्ट इन्कार करते हुए कहा –

"मैंने कोई अपराध नहीं किया। मैं घर से बाहर गया ही नहीं। आप कमला को भी बुला लीजिए।

राजा ने दो प्रतिहारियाँ कमला को बुलाने भेज दी। कमला का बयान बंकचूल के पक्ष में गया। हाँ, कमला ने इतना स्वीकार किया कि "मैं सो गई थी। जब मैं जागी तो स्वामी अपने शयनकक्ष से आकर मेरे भवन वाटिका वाले केलिसदन में आये थे।"

इस बयान के थोड़ी देर बाद महामंत्री भी आये उन्होंने महाराज विमलयश से कहा –

"पृथ्वीनाथ! नगर सेठ के यहाँ जो चोरी हुई, उस चोरी गये धन की दो पेटियाँ युवराज बंकचूल के शयनकक्ष में मिली हैं।"

दोनों पेटियाँ तत्काल राजसभा में लाई गईं। नगर सेठ ने अपनी पेटियाँ पहचान ली। अब राजा बोले:– "अब तुम क्या कहोगे? अब भी अपना अपराध स्वीकार कर लो।"

बंकचूल ने बड़ी ढीठता से कहा –

"मैनें कोई अपराध नहीं किया।"

अब राजा बोले।

"चोरी और सीना जोरी के मुहावरे को आज तुमने सिद्ध कर दिया। जो भी हो, तुम्हारी चोरी प्रमाणित हो चुकी है। अतः मैं तुमको देश निकाले का दण्ड देता हूँ। तुम धनपुरी राज्य की सीमा तीन दिन में त्याग दोगे। मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि धनपुरी राज्य का कोई सामन्त, सरदार या जमींदार तुमको शरण देगा तो वह राजद्रोही माना जाएगा।"

राजा की इस दण्डाज्ञा से सभा में सन्नाटा छा गया। थोड़ी देर बाद राजा पुनः बोले –

"न्याय परिषद् के पाँचों सदस्य मेरे न्याय–निर्णय के विषय में कुछ कहना चाहें तो कह सकते हैं।"

तब एक सदस्य ने कहा –

"पृथ्वीनाथ ! दण्ड कठोर है। फिर देश निकाले की कोई अवधि नहीं है। बंकचूल इस राज्य के भावी शासक हैं। अतः देश निकाले की एक छोटी–सी अवधि निश्चित कर दीजिए।"

"चोर जब चोर ही बना रहना चाहे तो उसकी कोई अवधि कैसे हो सकती है? फिर भावी शासक के नाते दण्ड को कम करना तो न्याय की हिंसा है। मेरा न्याय अपराधी की मनोवृत्ति और उसके अपराध की गुरूता के अनुसार है। मेरा अन्तिम निर्णय यही है। हाँ, मेरे दण्ड निर्णय में कुछ कमी रही हो तो उसे मैं बढ़ा सकता हूँ।"

पुनः सन्नाटा फैल गया। धीरे–धीरे लोग आपस में बातें कर रहे थे कि राजा बड़ा न्यायप्रिय है। उसने अपने पुत्र के साथ दण्ड देने में कोई रियायत नहीं की। धन्य है, राजा विमलयश का न्याय। थोड़ी देर बाद कमला अपने आसन पर खड़ी हुई। उसने निर्भीक होकर कहाः–

"हे राजन्। यह देश निकाला मेरे पति देव का ही नहीं। मेरा भी है। जहाँ ये जाएँगे, मैं भी इनके साथ जाऊँगी।

"तुम कैसे साथ जाओगी?" राजा ने कहा – "तुम तो अपने सास–श्वसुर दोनों को परम प्रिय हो। तुमने तो कोई अपराध किया ही नहीं है। तुम सुखों में रही हो, अतः देश निकाले के कष्ट कैसे सहन करोगी?"

"राजन्! कष्ट और सुख तो कर्मों की आँख–मिचौली हैं। फिर सास–श्वसुर, देवर–जेठ और ननद के रिश्ते तो पति के कारण ही हैं। जैसे लवण के बिना सब व्यंजन फीके हैं, वैसे ही पति के बिना भी सब रिश्ते शून्यवत् हैं।"

"राजन! आज से हजारों वर्ष पहले की उस घटना को याद कीजिए कि वनवास तो केवल राम को मिला था, फिर भी सीता जी उनके साथ गई थीं। पत्नी पति से अलग रहने की कल्पना तक नहीं कर सकती। क्या प्रभा कभी सूर्य से अलग रही है या चाँदनी चन्द्रमा को छोड़ पाती है अथवा छाया भी काया से दूर कब रह पाती है। मैं तो अपने पति परमेश्वर की छाया हूँ और वे मेरी काया हैं। जल और नहर कभी अलग नहीं होते।"

यह कहकर कमला बैठ गई। राजा भी कुछ नहीं बोले। उन्होंने पीछे मुड़कर देखा तो महारानी देवदत्ता रो रही थी। श्रीसुन्दरी भी उदास थी। राजा ने राजा होने के नाते दण्ड तो सही दिया पर पिता होने के नाते दुःखी तो वे भी थे। प्रजाजनों का हृदय भी आज भारी था। मंत्रीगण भी मौन थे।

राजा विमलयश ने सभा विसर्जित कर दी। सब उठ–उठकर जाने लगे। बंकचूल और कमला भी अपने महलों में चले गये।

4

राजा – "महारानी! बंकचूल के चारों साथी भी पकड़े गये हैं। उनको भी देश निकाले का दण्ड मिला है। वे भी कल बंकचूल के साथ जाएँगे।"

"लेकिन एक नया संकट और भी है।" महारानी ने बताया – "पुत्री श्रीसुन्दरी भी भाई और भाभी के साथ जाने का हठ कर रही है। अभी तक तो बहू कमला का हठ था, पर अब तो पुत्री भी–। कहते–कहते रानी का गला भर गया वे आगे नहीं बोल पाई।" तब राजा ने कहा :–

"बहू कमला का निर्णय तो उचित था। वह सती नारी है। पति के दुःख में भागीदार बनकर जाना उसका धर्म है। लेकिन पुत्री श्री सुन्दरी क्यों जाना चाहती है?"

रानी ने बताया –

महाराज! "वह भाई की ममता और प्यार के कारण जाने का हठ कर रही है। वह भैया–भाभी के कल्याण हेतु साथ जाना चाहती है। उसे विश्वास है कि बहिन का प्यार पाकर उसका भाई सुधर जाएगा।"

राजा ने परिचारिका भेजकर श्रीसुन्दरी को बुलवाया और उससे पूछा –

"बेटी, तेरी माँ ने जो कहा है, क्या वह सच है? तेरा भाई के साथ जाने का क्या औचित्य है?"

"पिता श्री! मैं भैया–भाभी के बिना नहीं रह सकती। मुझे विश्वास है कि बहिन के साथ रहने से मेरे भाई का दूसरा जन्म होगा।"

"पुत्री! जो बंकचूल माता–पिता की अगाध ममता और प्यार की उपेक्षा करता रहा। वह तेरी ममता से कैसे सुधरेगा? उसने तो सदा ही हमारी ममता की उपेक्षा की है।"

"फिर बेटी तू तो पराई धरोहर है। हम तो तेरे विवाह की चिन्ता

में हैं। तुझे तो किसी राजकुल की राजरानी बनना है। तुझे जाने की आज्ञा मैं नहीं दे सकता।"

"ये सब बातें मुझे माँ ने भी समझाई हैं।" श्रीसुन्दरी बोली – "भैया–भाभी ने भी बहुत रोका है पर पिताश्री, मेरा निश्चय तो अटल है। मैं भाई को नया जन्म देकर, अर्थात् सही अर्थों में मानव बनाकर लाऊँगी। अतः मेरा निश्चय अटल है। मैं जाऊँगी।"

राजा विमलयश श्रीसुन्दरी के सामने विवश हो गए, उनकी आँखों में भी आँसू आ गए। वे बोले –

"राजा को पिता नहीं होना चाहिए और पिता को राजा नहीं होना चाहिए। पर महाराज दशरथ भी तो पिता और राजा दोनों ही थे। राजा के नाते उन्होंने अपने वचन का पालन किया और राम को वनवास दे दिया, लेकिन पिता के नाते पुत्र के वियोग में प्राण त्याग दिए। मैं भी पुत्र वियोग को सहन करूँगा, पर राजधर्म को नहीं छोड़ूँगा"

"इतिहास आपका यश गायेगा महाराज!" रानी देवदत्ता ने कहा – "यदि मेरे कुछ भी पुण्य हैं तो मैं यही चाहती हूँ कि बंकचूल एक धर्मनिष्ठ मानव बनकर लौटे।"

पूरी धनपुरी नगरी की प्रजा इस बात से दुःखी थी कि युवराज बंकचूल अपने साथियों के साथ देश से बाहर जाएगा। वह तो दण्ड प्राप्त अपराधी है। लेकिन उसके साथ युवरानी कमला देवी और राजकुमारी श्रीसुन्दरी भी जा रही है। इन दोनों के साथ दास–दासियाँ और धन भी होगा, ये दण्ड प्राप्त अपराधी नहीं हैं। जो भी हो, प्रजाजन भी शोकातुर थे।

दूसरे दिन प्रातः जाने वालों की विदाई हुई। एक रथ में कमला और श्रीसुन्दरी बैठे थे। धन और आभूषण भी इन दोनों के साथ थे। दूसरे रथ में दास–दासी थे। बंकचूल और उसके साथी घोड़ों पर नगरी से बाहर खड़े थे। प्रजाजन, महामंत्री, नगर सेठ, राजा–रानी इन सब को विदा करने आये। बंकचूल घोड़े से उतरकर आया और माँ रानी देवदत्ता के पैर छुए। माँ रो पड़ी और बोली –

"पुत्र! तेरे भीतर श्रद्धा का जो बीज जमा है, उसकी जानकारी तुझे नहीं है। तू मेरी एक बात मानना कि नवकार मंत्र के जाप को मत छोड़ना। जीवन में चाहे जितने कष्ट आये या कुछ भी हो इस महामंत्र को साँसों के समान समझना, जैसे हमारा साँस लेना स्वाभाविक है उसी प्रकार इस महामंत्र का तू अपने जीवन में ख्याल रखना। अगर मंत्र की तू रक्षा करेगा तो यह महामंत्र तेरी रक्षा करेगा। इसी मंत्र प्रभाव से 'सत्य की धारणा' का अथवा श्रद्धा का बीज एक दिन अंकुरित होगा और फिर पल्लवित पुष्पित एवं फलदार वृक्ष भी बनेगा।"

"बेटा! एक ओर तेरी पत्नी कमला है, जो तेरे दुःखों को काटने तेरे साथ जा रही है। दूसरी ओर तेरी लाड़ली छोटी बहिन श्रीसुन्दरी है, जो तेरे कल्याण की कामना से तेरे साथ जा रही है। दोनों कोमलांगी नारियाँ हैं, उनका ख्याल रखना।"

"माँ, मैं तुम्हारी हर बात मानूँगा।" बंकचूल ने कहा – "नवकार मंत्र का आश्रय कभी नहीं छोड़ूँगा। बहिन और पत्नी की रक्षा वैसे ही करूँगा जैसे पलकें आँख की पुतलियों की रक्षा करती हैं।"

इसके बाद बंकचूल पिता के पास गया और उनके चरणों में झुक गया। पिता ने उसको वक्ष से लगा लिया और भरे गले से बोले –

"वत्स, मेरी ममता हार गई। पिता के नाते मैं तुझे विदा करने आया हूँ। राजा के नाते मैं कठोर था। तुझे विदा देते समय मेरा हृदय हाहाकार कर रहा है। अब तू जल्दी प्रस्थान कर, क्योंकि मेरा मोह अधीर हो रहा है।"

नगर सेठ धनमित्र और महामंत्री ने भी बंकचूल को आशीर्वाद दिया। बंकचूल ने रथ के पास आकर बहिन और पत्नी दोनों से कहा –

"ननद–भाभी, तुम दोनों अब भी अपना हठ छोड़ दो। हमें कई दिनों तक वनों में होकर चलना है और वन में ही ठहरना है। वन में हिंसक जानवर होते हैं। अगर तुम दोनों लौट जाओ तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

"सन्नारियाँ अपना निश्चय एक बार ही करती है।" श्रीसुन्दरी बोली–"औरत जो निश्चय कर लेती हैं, उसे बार–बार नहीं बदलती। बाहर रहकर हमें भी कुछ अनुभव प्राप्त होंगे।"

उसके बाद सभी लोगों ने प्रस्थान किया। रथ वनमार्ग पर दौड़ने लगे। उनके आगे पीछे साथ–साथ बंकचूल, हरिभद्र, महापद, कौशल और विक्रम अपने–अपने घोड़ों पर चल रहे थे। प्रजाजन, राजा–रानी आदि खड़े–खड़े रथों को जाते देखते रहे। थोड़ी देर बाद सब लौट आये।

बंकचूल, कमला और श्रीसुन्दरी के चले जाने से मात्र राजमहल ही नहीं, पूरी धनपुरी नगरी लुटी–पिटी सी लगने लगी। यहाँ के नर–नारी आपस में बातें भी नहीं करते थे। सभी शोक मग्न थे। उस दिन शायद ही किसी के घर भोजन बना हो। राजा–रानी ने भी उस दिन भोजन नहीं किया। महल के दास–दासी भी चुपचाप बैठे थे। किसी के पास मानो कोई काम ही नहीं था। शयनकक्ष में राजा–रानी शान्त लेटे थे। रानी ने चुप्पी तोड़ी–

"रात हो गई महाराज! बंकचूल जाने कहाँ होगा। बहू और पुत्री तो रथ में सोये होंगे, पर बंकचूल तो किसी पेड़ के नीचे लेटा होगा।"

"अभी तो सब वन में ही होंगे।" राजा ने कहा – "तुम ज्यादा चिन्ता मत करो। सबके साथ उनके पुण्य हैं। पुण्य सर्वत्र रक्षा करते हैं। चिन्ता तो मुझे भी है, पर कर्तव्य कर्म बड़ा कठोर होता है।"

फिर चुप्पी का वातावरण बन गया। राजा–रानी सोचते थे कि क्या कहें, पर कहने को कुछ था ही नहीं। सुख के दिनों में कहने को हजार बातें होती है, पर दुःख सब को दबा देता है।

उधर वन में एक सरोवर मिला। समय सूर्यास्त से दो–ढाई घड़ी पूर्व का था। बंकचूल ने सबसे कहा – "यहीं ठहरना ठीक रहेगा। आगे कोई सरोवर जाने कितनी दूर मिले।"

दोनों सारथियों ने रथ खड़े कर दिए और घोड़े खोलकर पेड़ों से बाँध दिए। बंकचूल और उसके साथियों ने भी घोड़ों को

बाँध दिया। जिसके पास जो था सो सूर्यास्त से पहले ही खा लिया। बंकचूल का भोजन उसके साथियों के पास था। कमला और श्रीसुन्दरी ने अपने भोजन में–से बंकचूल को देना चाहा तो उसने यह कहकर इनकार कर दिया –

"मैं पिता के न्याय को कलंकित नहीं करूँगा। मैं दण्ड प्राप्त हूँ। इस भोजन पर तुम दोनों का ही अधिकार है।"

"हमारे साथ का भोजन दास–दासी और सारथी करेंगे। हम दोनों आज उपवास करेंगी। कल दिन में वन फल खायेंगे या फिर जहाँ कहीं स्थायी निवास करेंगे, वहाँ आप जो कमाकर लायेंगे, उसका भोजन बनायेंगी। भले ही हम दोनों दण्ड प्राप्त नहीं हैं, पर हमारी रहनी आपसे अलग कैसे हो सकती है?"

बंकचूल कुछ नहीं बोला। उसने अपने साथियों से कहा –

"हम पाँच हैं। बारी–बारी से जगेंगे। वन में हिंसक जीव विचरण करते हैं।"

सबने अपना–अपना समय निश्चित कर लिया। धीरे–धीरे रात कट गई। सवेरा हो गया। नित्य कर्मों से निवृत्त होकर सभी वन मार्ग पर पुनः चल पड़े। यह वन मार्ग उज्जयिनी की ओर जाता था। चलते–चलते आठ दिन बीत गए। किसी–किसी दिन सभी ने पूरी रात और पूरे दिन भी विश्राम किया। बंकचूल किसी नगर में जाना नहीं चाहता था। उसने अपने मन में निश्चय किया कि वन प्रदेश के किसी गाँव अथवा पल्ली में रहूँगा। पल्ली में रहकर आस–पास के नगरों में अपनी चौर्य कला के चमत्कार दिखाऊँगा। नगर के कोलाहल भरे वातावरण में रहकर मैं अपनी कला का प्रदर्शन नहीं कर पाऊँगा। इस विचार से बंकचूल ने वन मार्ग बदल दिया और सघन वन के बीहड़ में प्रवेश किया। उसके चारों साथी और दोनों रथ उसी का अनुकरण कर रहे थे।

वन के पास और नगर से दूर वन वासियों के गाँव को पल्ली कहते हैं। ऐसी पल्लियों के लोग जंगल की जड़ी–बूटियाँ, फल–फूल नगरों में बेचकर उदर पोषण किया करते हैं। कुछ लोग वन्य पशुओं

का चर्म भी बेचते हैं। कुछ चोरियाँ भी करते हैं। ऐसे मिले–जुले पेशे वालों का वनग्राम पल्ली कहलाता है। बंकचूल ऐसी ही पल्ली में बसना चाहता था।

पन्द्रह दिन बीत गए, पर सघन वन का अन्त नजर नहीं आता था। सोलहवें दिन वन समाप्त हुआ तो एक गाँव दिखाई दिया। बंकचूल ने हर्ष भरे स्वर में कहा :–

"यह कोई पल्ली है। चलो यहीं चलते हैं।"

बंकचूल अपने साथियों के साथ पल्ली की ओर कुछ आगे बढ़ा तो उसने दूर से देखा कि एक बड़े मैदान में काफी लोगों की भीड़ है और ढोल मृदंगों की आवाज आ रही है। बंकचूल ने अपने साथियों से कहा –

"यहाँ कोई उत्सव हो रहा है। शायद देवपूजा का उत्सव हो।"

फिर उसने अपने साथी विक्रम से कहा–

"विक्रम, तुम जाकर देखो कि इस उत्सव का क्या रहस्य है?"

विक्रम घोड़ा दौड़ाता हुआ गया। उसने देखा कि दो युवक तलवार लिए एक दूसरे को मारने पर तुले हैं। दोनों के पक्षधर साथी अपने–अपने पक्ष के युवक का उत्साह बढ़ा रहे हैं– "शाबाश! वार करो, मार दो, उसका सिर अलग कर दो। देर मत करो।" विक्रम ने देखा कि यहाँ तो मौत का खेल खेला जा रहा है। दर्शकों में खड़े एक वृद्ध से विक्रम ने इस खेल का रहस्य पूछा तो उसने बताया –

"यह हमारी सिंहगुहा पल्ली के सरदार चुनने की परम्परा है। हमारा सरदार मर गया है। नए सरदार का चुनाव होना है। इन दोनों जवानों में जो जीतेगा, वही हमारा सरदार बनेगा। इसमें किसी की जान भी जा सकती है। जीते हुए युवक को कोई दूसरा चुनौती देगा तो पुनः द्वन्द्व युद्ध होगा। यह क्रम तब तक चलेगा, जब तक कोई चुनौती देने वाला न हो। अब तुम मुझे इन दोनों की तलवारबाजी देखने दो। तुम भी देखो।"

सब बातें जानने के बाद विक्रम बंकचूल के पास पहुँचा और सब बातें बता दी। बंकचूल ने अपने साथियों और रथवानों से पल्ली की

ओर चलने को कहा। जब सब लोग भीड़ के पास पहुँच गए तो पल्ली के लोग इन सबको बड़े कौतूहल से देखने लगे। ये सब भी दर्शक बनकर मौत का खेल देखने लगे।

उधर खेल चल रहा था। सागर नाम का युवक जयंत नाम के युवक पर भारी पड़ रहा था। दोनों ही तलवारों के वार करते और स्वयं को बचा रहे थे। बंकचूल ने धीरे–से एक वृद्ध से पूछा–"क्या इस प्रतियोगिता में कोई परदेशी भी भाग ले सकता है?"

"हाँ, ले सकता है।" वृद्ध ने कहा – "पहले इस द्वन्द्व का परिणाम देखो।"

थोड़ी ही देर बाद सागर ने जयंत की तलवार के टुकड़े कर दिए और उसे नीचे गिराकर उसक वक्ष पर अपनी तलवार टेक दी। निर्णय हो गया कि सागर जीत गया। इस प्रतियोगिता के संचालक वृद्ध ने उच्च स्वर से घोषणा की –

"सागर जीत गया है। मैं तीन बार आवाज दूँगा। यदि कोई सागर से मुकाबला करना चाहे तो मेरी आवाज के साथ मैदान में आये। यदि कोई नहीं आयेगा तो सागर ही हमारी पल्ली का सरदार होगा।"

यह कहने के बाद वृद्ध ने ललकारा–

"है कोई माई का लाल जो सागर से हाथ मिलाये? जो सागर से तलवारबाजी करने का बल रखता हो वह आगे आये।" उद्घोषक तीसरी बार पुकारता कि उससे पहले बंकचूल मैदान में आ गया उसने कहा –

"मैं सागर से मुकाबला करूँगा।"

पल्ली के सभी लोग बंकचूल को आश्चर्य से देखने लगे। सागर बलिष्ठ और ऊँचे डील–डौल का युवक था। इसके विपरीत बंकचूल कुछ हल्का था, पर वह तेजस्वी राजपुत्र था। तलवारबाजी तो उसका व्यसन था। उसने बढ़कर सागर से हाथ मिलाया तो सागर ने व्यंग्य में कहा –

"मित्र, तुम्हारे साहस की प्रशंसा करता हूँ। लेकिन याद रखना तुमने मौत से हाथ मिलाया है।"

"मौत से खेलने में मुझे बड़ा आनन्द आता है।" बंकचूल ने कहा – "इसीलिए मैं घर से निकला हूँ।"

तभी श्रीसुन्दरी पास आई और बोली –

"भईया, यह तुमने क्या किया? तुम गलत रास्ते पर पाँव रख रहे हो।"

"मेरी प्यारी बहिन, यदि मुझे सही रास्ते पर ही चलना होता तो माता–पिता की बात मान लेता। फिर उन्हें दुःख क्यों देता?" बंकचूल ने कहा – "मैं क्षत्रिय हूँ। मेरे बढ़े हुए कदम अब पीछे नहीं हट सकते।"

कमला देवी सोच रही थी कि मेरे स्वामी जब अपनी बहिन की बात ही नहीं मान रहे हैं तो मेरी बात क्या मानेंगे। यह सोचकर वह मौन ही रही। उधर द्वन्द्व युद्ध के संचालक वृद्ध ने बंकचूल से कहा –

"आप दोनों की प्रतियोगिता कल होगी। आप सब हमारी पल्ली के अतिथि हैं। आप नहा–धोकर भोजन करें और फिर विश्राम करें।"

सोलह दिन बाद आज सभी को भरपेट भोजन मिला था। इन लोगों को आज तीन झोंपड़ियाँ मिल गई थीं। एक में बंकचूल और उसके चारों साथी सोए, दूसरी में दोनों सारथी और दास–दासियाँ थे और तीसरी में श्रीसुन्दरी एवं कमला थी। कमला देवी अपने पति की विजय के लिए रात को जागकर नवकार मंत्र का जाप करती रही। सवेरे जब बंकचूल जागा तो उसे अपनी माँ महारानी देवदत्ता की यह सीख याद आ गई कि नवकार मंत्र का जाप और उसका सहारा मत छोड़ना। बंकचूल सोचने लगा "सिंहगुहा नाम की इस पल्ली में चालीस परिवार रहते हैं। पल्ली के सभी लोग सेवा भाव वाले और वफादार हैं। सभी अतिथि को देवता मानते हैं। यदि मैं इस पल्ली का सरदार बन जाऊँ तो बहुत बड़ी बात होगी। लेकिन सागर जैसे कद्दावर और बलिष्ठ युवक को पराजित करना बड़ा कठिन है। वह

अपने ही समान युवक जयंत को पराजित कर चुका हैं। हाँ , मल्ल युद्ध में वह मुझे उठाकर पटक सकता है। लेकिन तलवारबाजी में मुझसे आगे नहीं है। फिर भी मेरा अहंकार मुझे पराजित करा सकता है। मैं बिना वैर–भाव के सागर से खड्ग युद्ध करूँगा। न तो मैं उसके प्राण लूँगा और न घायल करूँगा। उसे थका–थका कर पराजित करूँगा। मुझे अपने खड्ग कौशल में तभी सफलता मिलेगी, जब मैं माँ की बात मानकर नवकार महामंत्र का आश्रय लूँगा।"

बंकचूल नवकार मंत्र का जाप करने बैठ गया। जाप करते–करते उसे ऐसा लगा कि उसके भीतर शक्ति का संचार हो रहा है। उसका हृदय अदम्य उत्साह से भरता जा रहा था। मंत्र जाप में बंकचूल का मन ऐसे डूब गया, जैसे मछली गहरे पानी में डूब जाती है। ढोल–ताँसों की आवाज सुनकर बंकचूल का जप ध्यान भंग हुआ। उसने देखा कि श्रीसुन्दरी थाल लिये सामने खड़ी है। श्रीसुन्दरी के बगल में कमला भी थी। पहले श्रीसुन्दरी ने बंकचूल के मस्तक पर रोली से तिलक किया। फिर कमला ने आरती उतारी और नीचे रखी तलवार बंकचूल के दोनों हाथों में देकर कहा –

"क्षत्राणी का धर्म निभा रही हूँ। शासन देव रक्षा करें।"

"तुम्हारा यह प्यार ही मुझे विजय का वरण करायेगा।" बंकचूल ने कहा – "इसी पल्ली में हमारे भाग्य का उदय होना है।"

"भईया अब प्रस्थान करो।" श्रीसुन्दरी ने कहा – "मैदान में पल्ली के लोग इकट्ठे हो गए हैं। आपका प्रतिद्वन्द्वी सागर भी पहुँच गया है। आप चलो हम लोग भी मौत का खेल देखने आ रहे हैं।"

बंकचूल मैदान में पहुँच गया। सागर ने उससे हाथ मिलाया। तभी उद्घोषक अथवा प्रतियोगिता संचालक ने घोषणा की –

"बीते दिन कल के द्वन्द्व युद्ध में सागर विजयी हुआ था और जयंत हारा था। यदि यह परदेशी बंकचूल चुनौती न देता तो सागर ही इस पल्ली का सरदार होता। आज के द्वन्द्व युद्ध में जो जीतेगा, वह भी तभी सरदार बनेगा, जब उसे कोई और चुनौती नहीं देगा। भाईयों! आप सभी जानते हैं कि सरदार बनने की यह प्रतियोगिता

मौत का खेल है। किसी एक का खड्ग किसी दूसरे की गर्दन धड़ से अलग कर सकता है। तो अब आप लोग सावधान होकर युद्ध देखें। मैं जब तीन कहूँगा तो दोनों प्रतियोगी युद्ध शुरू कर देंगे।"

यह कह संचालक पुनः बोला –

"एक, दो ..... तीन।" तीन कहते ही सागर ने कहा – "परदेशी मेरा वार सँभालो।"

"तुम वार करो।" बंकचूल ने कहा – "मैं सावधान हूँ।"

सागर ने बड़े जोरों का वार किया। बंकचूल एकदम बाएँ होकर दाँव बचा गया। सागर ने लगातार दस वार किये। बंकचूल बड़ा चतुर खिलाड़ी था, उसने दसों दाँव विफल कर दिए। श्रीसुन्दरी हर्ष से तालियाँ बजाने लगी। कमला भी प्रसन्न थी। बंकचूल के दास–दासी बंकचूल की जय–जयकार करने लगे। दर्शक कहने लगे– परदेशी में फुर्ती बहुत है। सागर का एक भी वार ढाल पर नहीं लिया। सागर की तलवार बार–बार धरती में लगी है या हवा में लहराई है।

घात – प्रतिघात होने लगे। बंकचूल सागर को थकाना चाहता था। सागर भी दाँत पीसकर बड़े जोरों का प्रहार करता था और बंकचूल असिविद्या में इतना प्रवीण था कि हर वार बचा जाता था। धीरे–धीरे सागर थकने लगा तो बंकचूल ने प्रहार किये। सागर ने कई प्रहार अपनी ढाल पर लिये। बंकचूल ने एक जोरदार प्रहार सागर की गर्दन पर किया, लेकिन सागर की गर्दन तक जब बंकचूल की तलवार आई तो उसने आघात इतना हलका कर लिया कि सागर की गर्दन पर खरौंच भी नहीं आई। तभी बंकचूल ने कहा –

"सागर तुम मेरे मित्र हो, शत्रु नहीं हो। गर्दन तो शत्रु की काटी जाती है। मैं चाहता तो तुम्हारी गर्दन धड़ से अलग कर सकता था। यही कारण है कि तुम्हारी गर्दन तक आते–आते मेरा आघात हलका हो गया था। तुम भरोसा रखना, मैं तुम्हें घायल भी नहीं करूँगा।"

सागर मन ही मन बंकचूल का दास बन गया। वह सोचने लगा – यदि मेरा दाँव चलता तो मैं बंकचूल की गर्दन उड़ा देता पर यह परदेशी तो बहुत उदार है। यह तो मित्र बनाने योग्य है।"

दोनों पुनः सावधान हुए। सागर ने पुनः सोचा–परदेशी की उदारता मुझे निर्बल बनायेगी। अब मुझे जोरदार तलवार चलाकर यह युद्ध जीतना है। सागर आवेश में आ गया। उसके आघात जोरदार होने लगे। कई बार बंकचूल बाल–बाल बचा। श्रीसुन्दरी घबरा गई। कमला भी आशंका से भरकर नवकार मंत्र जपने लगी। सागर के पक्षधर दर्शक चिल्ला–चिल्लाकर सागर का उत्साह बढ़ाने लगे। तभी श्रीसुन्दरी ने भाई को ललकारा– "भईया, मेरी राखी की लाज रखना तुम्हारे माथे पर मेरा तिलक है।"

बंकचूल को भी आवेश आ गया। उसने ऐसा जोरदार वार किया कि सागर की तलवार दूर जा गिरी। तभी बंकचूल ने कहा–

"मित्र सागर! मैं निहत्थे शत्रु पर भी वार नहीं करता, फिर तुम तो मेरे मित्र हो। तलवार उठाओ और वार करो।"

सागर ने तलवार उठाई। बंकचूल ने दूसरी बार भी सागर की तलवार अपने वार से दूर फेंक दी। बंकचूल के कहने से सागर ने पुनः तलवार उठाई तो तीसरी बार बंकचूल ने सागर की ढाल–तलवार दोनों दूर फेंक दी।

सागर बहुत थक चुका था। उसे तलवारबाजी में इतनी महारत जानकारी नहीं थी कि बंकचूल के वारों को काट पाता। उसने मन ही मन अपनी पराजय स्वीकार कर ली। बंकचूल के बार–बार कहने पर सागर ने दूर पड़ी ढाल–तलवार उठाई और सागर के पास आकर दोनों को नीचे रख दिया। फिर बोला –

"मित्र परदेशी, तुम वीर भी हो और उदार भी। तुम्हारी शक्ति अपार है। मेरे लिए तुम अजेय हो। मैं अपनी पराजय स्वीकार करता हूँ।"

तभी आवाजें आने लगीं – "सागर युद्ध करो। खड़े क्यों हो?"

सागर ने चिल्लाकर कहा –

"भाइयों! मैं अपनी पराजय स्वीकार करता हूँ। परदेशी ही हमारा सरदार है।"

श्रीसुन्दरी तो उतने आवेश में आ गई कि दौड़कर भाई के पास पहुँची और उससे लिपट गई। कमला के हर्ष का ठिकाना नहीं था।

संचालक ने घोषणा की –

"अभी बंकचूल हमारा सरदार ही है। पहले यह तो निश्चित हो कि कोई दूसरा चुनौती देने वाला नहीं है। मैं पुनः घोषणा करता हूँ कि किसी में बल हो तो बंकचूल से हाथ मिलाये। हे कोई माई का लाल जो बंकचूल से मुकाबला करे? मैं तीसरी बार पुनः कहता हूँ, जो इस पल्ली का सरदार बनना चाहे, वह बंकचूल से असि युद्ध करने आगे आये।"

कोई नहीं बोला। सब ओर चुप्पी थी तब संचालक ने घोषणा कर दी –

"साथियों! सिंहगुहा नाम की हमारी इस पल्ली का नया सरदार परदेशी बंकचूल चुना जाता है। बंकचूल अब तक परदेशी था, पर अब यह हमारी ही पल्ली का वासी और हमारा ही है। नियमानुसार सागर इसका नायब या वाजूबन्द सहायक बनकर रहेगा।"

बंकचूल की जय जयकार होने लगी। सागर और बंकचूल गले मिले। नियमानुसार बंकचूल को रहने के लिए पक्का मकान मिला। पल्ली का सरदार उसी पक्के मकान में रहेगा, ऐसा नियम था। बाकी गाँव वाले कच्चे मकान और झौंपड़ियों में रहते थे।

इस प्रकार बंकचूल के जीवन का यह नया अध्याय शुरू हुआ। अब वह सिंहगुहा पल्ली का सरदार या मुखिया था। इस परिवर्तन से श्रीसुन्दरी और कमला ने भी राहत की साँस ली।

5

नये सरदार की नियुक्ति की प्रसन्नता में तीन दिन तक नृत्य आदि के कार्यक्रम होते रहे। सिंहगुहा पल्ली की स्त्रियाँ भी मदिरापान करती थीं, पुरुष तो करते ही थे। सागर, जयंत, विक्रम कौशल, हरिभद्र और महापद के साथ बैठकर बंकचूल ने भी तीन दिन तक मदिरापान किया।

सिंहगुहा पल्ली पहले एक समृद्ध नगर था। आस–पास के खण्डहरों से पता चलता था कि लगभग पचास वर्ष पूर्व यह नगर किसी भूकम्प के कारण उजड़ गया था। फिर इसी खण्डित क्षेत्र में छोटा–सा ग्राम बस गया, जो सिंहगुहा पल्ली के नाम से प्रसिद्ध हुआ। निकट ही सघन वन था। वनराज सिंह की यहाँ एक गुफा थी। इसीलिए इस बस्ती का नाम सिंहगुहा पड़ गया। इस पल्ली में चालीस–पैंतालीस घर थे। बच्चे–बूढ़े–जवान और स्त्रियों को मिलाकर लगभग तीन सौ प्राणी रहते थे। ये सब लोग चोरी और लूट का धंधा करते थे। आस–पास के राहगीरों को लूटना, खेत–खलिहानों से अनाज चुरा लाना तथा इसी प्रकार की छोटी–छोटी चोरियाँ यहाँ के लोगों का मुख्य धंधा था। दूध के लिए गाय और बकरियाँ भी पालते थे। इस पल्ली के पास चर्मण्यवती नाम की एक नदी बहती थी। सिंहगुहा पल्ली चारों ओर से मिट्टी और काँटेदार झाड़ियों से घिरी थी। बाड़ इतनी ऊँची थी कि कोई मनुष्य या जानवर छलाँग लगाकर पल्ली में प्रवेश नहीं कर पाता था।

तीन दिन बाद नये सरदार बंकचूल की अध्यक्षता में सभा जुड़ी। बंकचूल सरदार के आसन पर सबसे ऊपर बैठा था। बाकी लोग नीचे बैठे थे। सभा का संचालन करते हुए पल्ली के एक वृद्ध ने कहा –

"सरदार बंकचूल, अब आप हमारी पल्ली के सरदार हैं। हमारी बस्ती का बच्चा–बच्चा आपकी आज्ञा का पालन करने को बाध्य रहेगा। हमारे आपस के झगड़ों का निर्णय भी अब आप ही करेंगे।

"सरदार! हम लोग चोरियाँ करके अपना पेट पालते हैं। आप

देख रहे हैं कि पल्ली के लोग अति निर्धन हैं। सब झोंपड़ियों में रहते हैं। चोरी करके हम अनाज, कपड़े और मुद्राएँ जो भी लायेंगे आपको सौंपेंगे फिर आप ही उनका वितरण करेंगे।

वृद्ध जब अपनी बात कह चुका तो बंकचूल ने कहा –

"आप लोगों ने मुझे अपना सरदार बनाया है तो इसीलिए नहीं बनाया कि आप मेरी आज्ञा का पालन करें। आप लोगों के सुख में वृद्धि करना, सुख–सुविधा के साधन जुटाना मेरा पहला कर्तव्य होगा। इसके लिए आपको मेरी कुछ बातें माननी होंगी।

"पहली बात तो यह कि आप खेती करना शुरू करें। वन का काफी बड़ा भू–भाग खेती के लिए खाली पड़ा है। खेती करके आप अन्न उपजायें, सब्जियाँ पैदा करें। अपना खुद का पर्याप्त अनाज होगा तो आपको खलिहान नहीं लूटने पड़ेंगे। चोरी के धन से समृद्धि नहीं आती। चोरी तो एक कला है।

"दूसरी बात यह कि आपके लिए चोरियाँ मैं और मेरे साथ आये साथी करेंगे। एक दो साथी मैं आपमें से भी साथ रखूँगा। इसका कारण यह है कि आप लोग चोरी की कला में प्रवीण नहीं हैं, इसलिए नौ दिन चले अढ़ाई कोस वाली कहावत चरितार्थ करते हैं, यानी महीने में बीस दिन चोरी करके भी आप कुछ भी धन नहीं जुटा पाते हैं। मैं बड़े श्रीमंतो, श्रेष्ठियों और धन कुबेरों की एक दो चोरी करके ही आप लोगों को भरपूर धन दूँगा। इतना धन दूँगा की आपकी झोंपड़ियाँ पक्के मकानों में बदल जायेंगी और आपकी स्त्री–बच्चों तथा आप पर अच्छे कपड़े भी होंगे।"

इतना कहकर बंकचूल जब चुप हुआ तो सभा में पल्लीवासी उसकी जय–जयकार करने लगे। कमला और श्रीसुन्दरी भी बंकचूल की बातें सुन रही थी। श्रीसुन्दरी ने कमला से कहा –

"भाभी, शुरू में भैया ने कितनी अच्छी बात कही है। वह यह कि – **चोरी के धन से समृद्धि नहीं आती।** भैया ने सबको खेती करके अन्न पैदा करने की प्रेरणा देकर अपने बदलते जीवन का शुभ संकेत दिया है।"

"यदि तुम्हारे भैया का जीवन बदल गया तो हमारा साथ आना सार्थक हो जायेगा।" कमला ने कहा– "एक न एक दिन ऐसा अवश्य होगा कि मेरे स्वामी एक आदर्श मानव बनेंगे।"

श्रीसुन्दरी कुछ बोलती की बंकचूल पुनः कहने लगा–

"साथियों! मैं यह नहीं कहता कि आप केवल खेती ही करें, चोरियाँ करना छोड़ दें। आपका सरदार मैं जब स्वयं बड़ी चोरियाँ करूँगा तो आपसे चोरी छोड़ने के लिए नहीं कहूँगा। लेकिन चोरों की भी एक आचार–संहिता होती है। चोरी के कुछ नियम होते हैं। आप उन नियमों का पालन करेंगे।"

"हम आपकी हर बात मानेंगे।" एक व्यक्ति बोला – "आप नियम बताइये। अभी तक हमें आप जैसा ज्ञानवान सरदार नहीं मिला था।"

"तो फिर ध्यान देकर मेरी बात सुनिए।" बंकचूल ने कहा – "पहला तो यह है कि आप लोग पल्ली के चारों ओर पाँच–पाँच कोस की दूरी तक किसी राहगीर को नहीं लूटेंगे। उससे लोग निर्भय होकर आ–जा सकेंगे और हमारी पल्ली की यह बदनामी नहीं होगी कि यहाँ चोर–लुटेरे रहते हैं। या यह चोर पल्ली है?

"हमें मंजूर है।" एक साथ सभी स्वर गूँजे – "आप नियम बताते जाइये।"

"पाँच कोस की सीमा के बाद आप किसी निर्धन राहगीर को नहीं लूटेंगे। लूटना केवल उन्हीं को है, जो धनवान हैं। इसी तरह निर्धन की चोरी भी नहीं करेंगे। भले ही वर्ष में एक चोरी करें। पर धनवान की चोरी करें।"

"चोरी निर्धन की करें या धनवान की – दोनों की चोरियों में बराबर का श्रम है और पकड़े जाने का खतरा भी है। अतः करें तो धनवान की चोरी करें।"

"एक नियम यह अपनाइये कि किसी स्त्री को कभी अपमानित न करें। स्त्री कितने ही आभूषण पहने हो, उसको न लूटें।

"अन्तिम नियम यह कि जब तक अपनी प्राण रक्षा का संकट न हो, किसी पर प्रहार न करें। न तो किसी को घायल करें और न किसी के प्राण लें।"

"हमें आपकी सभी बातें मंजूर हैं। सभी ने एक स्वर से स्वीकृति दे दी। बंकचूल जैसा सरदार पाकर पल्ली के सभी लोग अति प्रसन्न थे। सभा को विसर्जित कर बंकचूल पत्नी और बहिन के साथ घर पहुँचा। जब तीनों बैठ गये तो कमला ने कहा –

"स्वामी! आपने लोगों को खेती करने की प्रेरणा दी, यह तो बहुत ही उत्तम है। यदि आप लोगों से चोरियाँ छुड़ाते और स्वयं भी चोरियाँ न करने का निश्चय करते और भी अधिक उत्तम होता।"

"प्रिये कमला! जब मैं धनपुरी नगरी में रहता था तो वेश्या का नृत्य–गान सुनने भी जाता था। यहाँ आकर वह सब छोड़ दिया। यहाँ ऐसा अवसर भी नहीं है। तुम कहो तो मैं मदिरापान करना छोड़ सकता हूँ। जुआ खेलना भी छूट गया समझो, पर चोरी नहीं छोड़ूँगा। कारण यह है कि मैं आम लोगों की तरह चोरी को पाप नहीं समझता।"

"तो फिर आज से मदिरा बन्द?" इस बार श्रीसुन्दरी ने पूछा– "कल तक तो मदिरा खूब पीते रहे, क्या आज से मदिरा बंद करोगे?

"कर दूँगा। बंकचूल ने कहा – "लेकिन मेरी भी एक शर्त है। तुम ननद–भाभी यहाँ के लोगों को यह उपदेश नहीं दोगी कि चोरी करना पाप है।"

"हमें आपकी शर्त मंजूर है।" कमला ने कहा – "अब मैं आपका ध्यान दूसरी ओर ले जाना चाहती हूँ। चर्मण्य नदी के इस ओर एक पुराना जीर्ण जिनालय और साधुओं का उपाश्रय भी है। कभी इस उपाश्रय में साधु मुनिराज ठहरते होंगे, चातुर्मास के प्रवचन होते होंगे। जिनालय में भी लोग पूजा–अर्चना और नवकार का जाप करते होंगे। आज सब भग्न हो चुका है। धर्म आराधना का कोई केन्द्र तो होना चाहिए। आप इनके जीर्णोद्धार की बात भी मन में रखें।"

इसी बीच सागर आ गया। उसने कहा – "सरदार आज हमारे

घर चलो। आपको मदिरा का निमंत्रण है। आज मैं सभी को मदिरापान की दावत दूँगा। जयन्त आदि हमारे साथी बाहर खड़े हैं। मैं आपको लेने आया हूँ।"

"लेकिन मित्र सागर, मैं मदिरा छोड़ चुका हूँ।" बंकचूल ने कहा– "कल तक आप साथियों का साथ दिया, अब तो दूध पिलाने की बात करो।"

"लेकिन आपने मदिरा छोड़ी क्यों?" सागर ने कहा – मदिरा तो अमृत है। मदिरा का आनन्द ही कुछ और है।"

बंकचूल सोचने लगा कि यदि यह कहूँ कि बहिन और पत्नी के कहने से मदिरा छोड़ी है तो उचित न होगा। अतः उसने बताते हुए कहा –

"मित्र सागर! दो नशे एक साथ नहीं हो सकते। मुझे तो चोरी करने का नशा ही इतना चढ़ा रहता है कि अब मदिरा का नशा कैसे करूँ? चोरी के नशे के कारण मैनें मदिरा के नशे का त्याग कर दिया है।"

"जब हमारे सरदार ने ही मदिरा छोड़ दी तो फिर मैं भी उसका त्याग करता हूँ। चलो आज दूध की दावत ही सही।" यह कहते हुए सागर बाहर गया। बंकचूल भी उसके पीछे चल दिया। सागर ने जयन्त आदि अपने साथियों से मदिरा छोड़ने की बात कही तो उसके साथियों ने भी मदिरा छोड़ने का निश्चय कर लिया। इधर श्रीसुन्दरी और कमला भी प्रसन्न थी कि बंकचूल के साथ उसके साथियों ने भी मदिरा का त्याग कर दिया था।

एक दिन बंकचूल ने सागर को बुलाकर मंत्रणा की और पूछा–"हमारी पल्ली के निकट कौन सा नगर है।" इस पर सागर ने बताया कि रामपुरी नगरी सबसे निकट है। यहाँ से पच्चीस कोस दूर है। उज्जयिनी नगरी ज्यादा दूर है।

रामपुरी नगरी की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करने के बाद बंकचूल ने सरदार बनने के बाद पहली चोरी करने का निश्चय किया। उसने तीन साथी अपने लिये और एक सागर को लिया पाँचवा वह स्वयं

था। पाँचों जने अपने–अपने घोड़ों पर सवार होकर रामपुरी नगर पहुँच गये। वहाँ एक धर्मशाला में ठहरे। धर्मशाला के व्यवस्थापक को बंकचूल ने एक स्वर्ण मुद्रा दी तो वह उन पर मेहरबान हो गया। बंकचूल ने कहा – कभी–कभार हम नाच–गाना सुनने को कोठे पर जायेंगे और रात को देर से लौटेंगे।

"आप चिन्ता न करें।" धर्मशाला के व्यवस्थापक ने कहा – "नाचने वाली को यहाँ भी बुला लें तो मुझे ऐतराज नहीं।"

इस तरह से पाँचों लोग तीन दिन तक रामपुरी नगरी में ठहरे। इन तीन दिनों में बंकचूल ने नगरी में भ्रमण करके धनचन्द्र नाम के एक श्रेष्ठी की हवेली को चुना। हवेली का पिछवाड़ा एक गली में था और उस गली में दूसरी ओर मकानों का भी पिछवाड़ा था। इस तरह इस गली में किसी घर का प्रवेश द्वार नहीं था, अर्थात् दोनों और पिछवाड़े थे। धनचन्द्र की हवेली का पिछवाड़ा चिह्नित कर बंकचूल धर्मशाला में आ गया और अपने साथियों से कहा –

"आज रात को एक बड़े सेठ के यहाँ चोरी करनी है। चोर की दृष्टि बड़ी पैनी होती है। मैनें सब कुछ भाँप लिया है।"

ऐसी बड़ी चोरी करना सागर के लिए पहला अवसर था। उसने दबी जबान से पूछा–

"इतने बड़े सेठ के यहाँ चौकीदार, पहरेदार भी होंगे।"

"वे भी हैं।" बंकचूल ने बताया – "पिछवाड़े एक बार जाते हैं। पूरी रात द्वार पर बैठे खट–पट सुनने के लिए कान लगाये रहते हैं।

"सागर! चोरी करने का पहला गुण है कि घबराहट और हड़बड़ी नहीं होनी चाहिए। सब काम बड़ी तसल्ली और इत्मीनान के साथ करने चाहिए। लेकिन एक–एक क्षण मूल्यवान समझना चाहिए।"

सब बातें समझाकर बंकचूल ने कुछ जरूरी सामान अपनी कमर से बाँधा। चारों साथियों को लेकर वह धर्मशाला के व्यवस्थापक के पास पहुँचा और उसे समझाया आज हम रात को देर से लौटेंगे। हो सकता है, तीसरे प्रहर लौटें।'

"मैं समझ गया।" व्यवस्थापक मुस्कराते हुए बोला–"नाचने वाली के यहाँ जाना है न?"

"तुम बहुत समझदार हो।" बंकचूल ने कहा – "कल हम चले जायेंगे। अपना किराया अभी ले लो।

"यह कह बंकचूल ने पांच स्वर्ण मुद्राएं व्यवस्थापक को दे दीं। वह प्रसन्न हो गया। उसके बाद ये पाँचों एक नगरप्रिया के यहाँ आधी रात तक रहे। आधी रात के बाद पाँचों श्रेष्ठी धनचन्द्र की हवेली के पिछवाड़े पहुँचे। पक्की दीवार थी। बंकचूल ने अपने कमर से बंधा यंत्र निकाल कर दीवार में सेंध लगाना शुरू कर दिया। कौशल ने भी साथ दिया। एक व्यक्ति आसानी से प्रवेश कर सके ऐसा गोल द्वार बन गया। पाँचों अन्दर चले गये। बंकचूल ने अपने साथी विक्रम को इशारा किया, उसने ताला तोड़ा। एक पेटी निकाली। उसको खोला तो उसमें रत्न भरे थे। बंकचूल अपने साथ झोला ले गया था, झोलों में उसने रत्न भर लिए। तीन थैलियाँ भर लीं। सागर चाहता था कि एक दो थैलियाँ और भर लें तो बंकचूल ने कान में कहा– "लालच के कारण चोर पकड़ा जाता है। एक क्षण भी रूकने की जरूरत नहीं है। धैर्यपूर्वक बिना हड़बड़ाहट के निकल चलो।"

पाँचों धर्मशाला आ गये। व्यवस्थापक सो रहा था। पाँचों ने अपने–अपने घोड़े निकाले। रत्नों को यत्न से छिपाया और चल दिये। रामपुरी नगरी के प्रवेशद्वार के रक्षक ने उन्हें टोका तो बंकचूल ने बड़े धीरज से कहा –

"परदेशी राहगीर हैं। अपने घर जा रहे हैं।"

द्वाररक्षक को कोई संदेह नहीं हुआ। थोड़ी दूर तो ये लोग घोड़ों को टहलाते हुए ले गये। फिर उन्होंने घोड़े दौड़ाये। काफी दूर जाने के बाद बंकचूल ने सागर से कहा –

"सागर, कोई वनमार्ग देखो। रामपुरी का राजा हमारे पीछे सैनिक भेजेगा।"

अब पाँचों लोग वनमार्ग से सिंहगुहा की ओर जाने लगे। उधर धनचन्द्र की चोरी का शोर मच गया। राजा का खोजी दस्ता आया। उसने घूम फिर कर बताया–

"चोर पांच हैं, यानी चोरी करने पाँच लोग आये हैं।"

राजा ने अपनी सम्मति दी –

"चोर बाहर के हैं। अपनी नगरी में तो चोर रहे ही नहीं। सभी मेरे दण्ड से भयभीत हैं। बाहर के पाँच चोर चोरी कर ले जाये, यह बड़ी लज्जा की बात है। अभी पता करो कि यहाँ की धर्मशालाओं में पाँच परदेशी किसमें ठहरे थे।"

उस धर्मशाला का पता चल गया, जिसमें बंकचूल अपने चारों साथियों के साथ ठहरा था। राजा ने धर्मशाला के व्यवस्थापक को बुलाकर ठहरने वालों के बारे में जानकारी माँगी तो उसने बताया–

"पृथ्वीनाथ! पाँचों धनवान घराने के लगते थे। मुझे भी अच्छा पुरस्कार दिया था। वे रात को नर्तकी के यहाँ गाना सुनने और नृत्य देखने जाते थे। पाँचों के पास अच्छी नस्ल के घोड़े भी थे। रात भी वे गाना सुनने गये थे। "

"वे कहां के रहने वाले थे।" राजा ने पूछा–उन्होंने अपना ठौर–ठिकाना कहाँ का बताया था?"

"उज्जयिनी बताया था।" यह कहकर धर्मशाला का व्यवस्थापक मौन हो गया। राजा ने अपने खोजी दस्ते से कहा –

"घोड़ों के पद चिह्नों का पीछा करते हुए पाँचों को पकड़ो।"

खोजी दस्ता और सैनिक संध्या तक लौट आये और निराशा के स्वर में कहा –

"कुछ दूर तक तो घोड़ों की टापों के चिह्न मिले हैं। उसके बाद पता नहीं किधर गये। ऐसा अनुमान है कि वनमार्ग से गये होंगे। वनमार्ग में पद चिह्न नहीं मिले।"

उधर बंकचूल सही सलामत सिंहगुहा पहुँच गया। वह एक दिन भी नहीं रूका। सागर और विक्रम दो साथियों को साथ लेकर वह चोरी

के रत्नों के साथ सीधा उज्जयिनी गया। रत्नों का आदान–प्रदान तो असम्भव था। पकड़े जाने का पूरा भय था। बंकचूल रत्न बेचकर स्वर्णमुद्राएं लेना चाहता था। उसका व्यक्तित्व ऐसा था कि कोई भी उस पर यह संदेह नहीं कर सकता था कि यह चोरी के रत्न बेच रहा है। आखिर तो वह राजकुमार था।

बंकचूल जब उज्जयिनी के एक रत्नपारखी के यहाँ पहुँचा तो यों ही सहज भाव से जौहरी ने पूछ लिया–

"इतने सारे रत्न एक साथ बेचने की क्या जरूरत पड़ गई श्रीमान्!

सेठ जी– बाप–दादे छोड़ गये हैं तो इसलिए कि हम उनकी संतान अपना काम चलाये। अब क्या करें, जीवन स्तर तो घट नहीं सकता। उन रत्नों का होगा भी क्या? बेकार में रखवाली करनी पड़ती है।"

तीन थैलियों के रत्न कई लाख स्वर्ण मुद्राओं में बिके। स्वर्णमुद्राएँ लेकर बंकचूल पन्द्रह दिन बाद पल्ली में लौटा। उसने सभी घर पक्के बनवाने शुरू कर दिये। दो महीने में सभी के घर पक्के बन गये। इतना ही नहीं, पल्लीवासियों के नये कपड़े भी बंकचूल ने दिलवाये।

फिर एक दिन बहन श्रीसुन्दरी ने याद दिलाया–भईया, तुम कहते थे कि मैं सामने के नदी पार जिनालय का जीर्णोद्धार कराऊँगा, धर्म क्रियाओं के लिए उपाश्रय भी बनवाऊँगा। क्या भूल गये?

बंकचूल–हाँ, तुमने अच्छा याद दिलाया —— इस पाप का भार कुछ तो हल्का हो —— और वह हँस पड़ा —— फिर उसने दूसरे ही दिन जिनालय और उपाश्रय का नवनिर्माण भी शुरू करा दिया। पल्लीवासी बंकचूल की जय–जयकार करने लगे। सभी के मन में बंकचूल के प्रति अमित आदर था। सबके सब अपने को उसका दास समझते थे। आषाढ़ का महीना शुरू हो गया। पल्ली के लोग अपनी–अपनी सामर्थ्य और जरूरत के अनुसार खेतों की मेड़ बाँध रहे थे। मेड़ों के सीमा विभाजन से सबके खेत अलग–अलग थे।

सबकी इतनी सामर्थ्य नहीं थी कि हल बैल खरीद सकें। इसलिए बंकचूल ने सुझाव दिया कि खेत तो अलग रहेंगे पर आप सब लोग मिलकर सामूहिक खेती करें। दस–बारह जोड़ी बैल सभी के खेत जोत देंगे। आषाढ़ की वर्षा होते ही आप लोग मक्का, बाजरा, ज्वार, उड़द, मूँग और अरहर बो दें। घर का अनाज और घर की दालें। सब अपना होगा। आपके लिए बड़ी–बड़ी चोरियाँ करके धन मैं जुटाऊँगा। इस छोटी सी पल्ली को ही सुन्दर और समृद्ध बना दूँगा।" बंकचूल की ये बातें सुनकर एक वृद्ध ने कहा–

"सरदार, आप हमारे सरदार ही नहीं, हमारे परमात्मा हैं। आप हमारे बिना छत्र के राजा हैं और हम सब आपकी प्रजा हैं। हम लोगों के भी कुछ पुण्य जरूर थे, जो आप–जैसा सरदार पा गये। इससे पहले हुए सरदारों के लिए हम चोरियाँ करते थे और सरदार हम पर बस हुक्म चलाता था।"

"मेरी ज्यादा प्रशंसा मत करो।" बंकचूल ने कहा – "मैं अपना कर्त्तव्य पालन कर रहा हूँ।"

6

बंकचूल ने एक दिन अपने यहाँ बैठक की। बैठक में धनपुरी से आये उसके चारों साथी थे और सागर, जयन्त तथा बादल तीन साथी स्थानीय थे। बंकचूल ने कहना शुरू किया –

"साथियों! चोरी के लिए अंधेरी रात वरदान होती है। इसी तरह वर्षा ऋतु और जाड़ों की ऋतु भी चोरों के लिए अनुकूल है। इस बार मैं विक्रम, महापद, सागर तथा जयन्त आप चार साथियों को लेकर अजीतपुर नगर चोरी करने जाऊँगा। मेरी योजना है कि मैं सार्थवाह का पुत्र हरिनंदन बन करने जाऊँगा और कहूँगा कि यहाँ से पन्द्रह कोस दूर वन में मेरा सार्थ बरसात के कारण रूका हुआ है।"

"लेकिन सरदार आपने अजीतपुर के लिए चोरी को चुना है, यह बड़े खतरे का काम है। कारण यह है कि अजीतपुर का राजा अजितसेन बड़ा क्रूर और भयंकर है। उसने चोरों के हाथ कटावायें हैं, प्राणदण्ड भी दिया है। तभी कोई चोर वहाँ चोरी करने की कल्पना तक नहीं कर सकता। सोचते ही रूह काँप जाती है।" सागर कहता चला गया– "आप कोई दूसरे नगर के बारे में सोचें।"

"सागर, मुझे खतरों से खेलने में बड़ा मजा आता है।" बंकचूल ने कहा – "अजीतपुर के राजा अजितसेन के अहंकार को मिट्टी में मिलाकर मैं वहाँ चोरी करने में सफल हो जाऊँगा, जिसे प्राण भय हो, वह मेरे साथ न चले।"

"आपके एक इशारे पर हम एक बार नहीं, सौ बार अपने प्राण दे सकते हैं।" जयन्त ने कहा–"हम आपके साथ चलेंगे।"

सागर और बादल ने भी जयन्त का समर्थन किया। विक्रम, महापद तो बंकचूल की तरह खतरों से खेल चुके थे। नगर सेठ की चोरी में बहुत बड़ा खतरा उठा चुके थे। सबकी सहमति/स्वीकृति पाकर बंकचूल ने आगे कहा –

"अजीतपुर का प्रवास हमारा लम्बा प्रवास होगा।

हमें रात की घनघोर वर्षा की प्रतीक्षा करनी होगी। जिस दिन रात को घनघोर वर्षा होगी, उसी रात हमको सफलता मिलेगी।"

"लेकिन ठहरेंगे कहाँ?" बादल ने प्रश्न किया – "किसी धर्मशाला में ठहरना तो संकट मोल लेना होगा।"

बंकचूल ने कहा –

"इस बार हम किसी प्रसिद्ध नगरप्रिया के यहाँ ठहरेंगे। प्रसिद्ध नगरवधू के यहाँ ही सामन्त, श्रेष्ठिपुत्र और राजपुत्र आया करते हैं। मैं भी तो एक धनी सार्थवाह का पुत्र बनकर जाऊँगा।"

यथा समय विक्रम, महापद, सागर, बादल और जयंत के साथ बंकचूल ने अजीतपुर के लिए प्रस्थान किया। पच्चीस, तीस कोस की दूरी तय करके ये लोग दोपहर को अजीतपुर में प्रविष्ट हुए। अजीतपुर की शोभा, समृद्धि, ऊँचे–ऊँचे भव्य भवन और हाट बाजार देखकर बंकचूल को अपनी नगरी की याद आ गई। उसे अपने माता–पिता महारानी देवदत्ता और महाराज विमलयश की भी स्मृति हो आई। थोड़ी देर बाद सामान्य होकर बंकचूल ने रूपवती और समृद्ध वेश्या के ठिकाने का पता लगाया। राजेश्वरी नाम की एक वेश्या बड़ी समृद्ध थी। उसका भवन तीन खण्ड का था। भू–खण्ड पर रथों और घोड़ों के रखने की व्यवस्था थी। उसके वहाँ के धनी–अतिथि रथों और घोड़ों पर ही आते थे। मध्य खण्ड में कई कक्ष थे। एक नृत्य कक्ष बड़ा विशाल था। छोटे–छोटे कक्षों में दस तरुणी वेश्याएँ रहती थीं। ऊपर के खण्ड में राजेश्वरी का विलास कक्ष था। राजेश्वरी बड़ी अच्छी नृत्यांगना थी। वह केवल नृत्य करती थी। जो लोग भोग की इच्छा से यहाँ आते थे, उनके लिए तरुणी वेश्याएँ प्रस्तुत की जाती थीं। राजेश्वरी स्वयं पुरूष संग से अछूती थी। बड़े–बड़े धनी आये, पर लाखों स्वर्णमुद्राएं देकर भी वे राजेश्वरी को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सके। उसने संकल्प किया था कि जिस पुरूष के प्रति वह स्वयं आकर्षित होगी, उसी के लिए अपना तन समर्पित करेगी। उसी नृत्यांगना राजेश्वरी के भवन में बंकचूल

पहुँच गया। नीचे रहने वाले सेवकों ने छहों घोड़े घुड़सवाल में बांध दिये। बंकचूल ने बीस स्वर्णमुद्राएँ मुख्य सेवक को देकर उससे कहा –

"यह राशि घास, दाना, गुड़ और घी के लिए रखो हमारे घोड़ों को भीगे हुए चने अवश्य खिलाना। एक सेर गुड़ और एक पाव घी प्रत्येक घोड़े को देना। घास–दाना तो देना ही है। पन्द्रह दिन तक के खर्चे में से जो बचे, उसे अपने पास रखना। जाते समय तुम्हें पुरस्कार भी देंगे।"

अश्वरक्षक सेवक बंकचूल की उदारता से प्रसन्न हो गये। विक्रम ने परिचय दिया –

"धनविलास सार्थवाह के पुत्र हरिनंदन बड़े उदार हैं। ये धन को पानी की तरह बहाते हैं। इनका सार्थ बरसात के कारण वन में रुका है।"

अब बंकचूल ऊपर चढ़ गया। ऊपर का प्रबन्ध नारियों के हाथ में था। मुख्य प्रबन्धिका ने उठकर छहों का स्वागत किया। फिर पूछा–

"आप लोग अलग–अलग कक्षों में ठहरेंगे या छह शय्याओं का एक बड़ा कक्ष चाहिए?"

"हम सब साथ ही रहेंगे। बंकचूल ने कहा –" जरूरत पड़ने पर कोई रात अलग–अलग भी बितायेंगे।"

"मैं समझ गई।" प्रबन्धिका ने कहा –

"अभी तो हम मार्ग की थकान मिटायेंगे।" बंकचूल ने कहा – "संध्या को भोजन करके सोयेंगे। सवेरे अपना कार्यक्रम बतायेंगे।"

बंकचूल को एक बड़ा कक्ष मिल गया। सभी साथी उसमें ठहर गये। संध्या को सभी ने भोजन किया और सो गये। सवेरे सभी नित्यकर्म से निवृत्त हुए। सभी ने नाश्ता किया और दूध पिया। फिर बंकचूल ने प्रबन्धिका को बुलाकर कहा –

"मेरे साथियों को दोपहर का भोजन करा देना। मैं एक व्यापारी से

मिलने नगर में जा रहा हूँ। आज मेरे पाँचों साथियों की रात में सोने की व्यवस्था अलग–अलग कर देना।" और आपके लिए ——।

"मेरी इच्छा तो कुछ और ही है।" बंकचूल ने कहा – "मैं आपकी स्वामिनी राजेश्वरी का संग पाने का इच्छुक हूँ।"

प्रबन्धिका ने कहा –

"यह सम्भव नहीं है। वे अतिथियों को मात्र दर्शन देती हैं।"

"यदि कोई उनका संग–साथ चाहे तो उनका मूल्य क्या है?" बंकचूल ने कहा – "आप मूल्य तो बताइये?"

अनमोल का क्या मूल्य होगा। वे तो अनमोल हैं" प्रबन्धिका ने कहा – "उन्हें कोई पुरूष पसंद आ जाये। उनके मन में बस जाये तो वे उसकी बिना मूल्य की समर्पित प्रियतमा होंगी।"

"अच्छा तो फिर उनके दर्शन ही करा दीजिए।" बंकचूल ने कहा– "मैं उनके दर्शनों से ही तृप्त हो जाऊँगा।"

"इसके लिए मैं आपका परिचय देकर उनसे कहूँगी।" प्रबन्धिका ने कहा – "जिस दिन वे चाहेंगी, आपको ऊपर के खण्ड में बुला लेंगी।"

इसके बाद बंकचूल नीचे चला गया। पहले वह वस्त्रों के बाजार में घूमा, फिर एक दूसरे बाजार में गया तो वहाँ मदिरा की एक दुकान पर बड़ी भीड़ थी। सुरा विक्रेता के बहुत कमाई हो रही थी। घूमते–घूमते बंकचूल सर्राफे की दुकान पर चला गया। उस दुकान पर दुर्गादत्त सर्राफ का नाम पट्ट लिखा हुआ था। एक मुनीम गद्दी पर बैठा था और दूसरी गद्दी पर दुकान का मालिक सेठ दुर्गादत्त बैठा था। यहाँ भी काफी लोग थे। ज्यादातर लोग अपने आभूषण गिरवी रख रहे थे। सेठ दुर्गादत्त आभूषणों को देखता, फिर कहता – उसकी इतनी मुद्राएँ मिलेंगी। ग्राहक की स्वीकृति मिलने पर सेठ नाम–पते की पर्ची आभूषण से बांधकर मुनीम से कहता–मुनीम जी, इन्हें इतनी स्वर्ण या रजत मुद्राएँ दे दो। ग्राहक धन लेकर चला जाता। कुछ ग्राहक स्वर्ण मुद्राएँ देकर अपना गिरवी रखा आभूषण छुड़ा रहे थे। कुछ नये आभूषण खरीद रहे थे। कुछ पुराने आभूषण

बेचने आये थे। बंकचूल बड़ी सावधानी से लेन–देन देख रहा था। उसकी नजर एक चोर की पैनी नजर थी।

थोड़ी देर बाद एक सेवक बंकचूल के पास आया और बोला– "आपको सेठ जी बुला रहे हैं।

बंकचूल सेठ दुर्गादत्त के सामने जा बैठा तो दुर्गादत्त ने कहा–

"कहिए, मैं आपकी क्या सेवा करूँ? क्या कोई आभूषण गिरवी रखने आये हैं? आप परदेशी मालूम पड़ते हैं। एक बात स्पष्ट कर दूँ कि पहले महीने की ब्याज मैं अग्रिम काट लेता हूँ।"

"आपने ठीक पहचाना।" बंकचूल ने बड़े शिष्ट भाव से कहा– "मैं उज्जयिनी से आया हूँ। मेरे पास उज्जयिनी की कुछ स्वर्णमुद्राएँ हैं। आप उनकी रजत मुद्राएँ कर दें तो मुझे हाट से क्रय में सुविधा होगी।"

दुर्गादत्त मन मसोस कर रह गया। सोचने लगा – समय खराब करने वाला ग्राहक है। कुछ लेना–न–देना, मुद्राएँ तुड़ाने चले आया। लेकिन दुर्गादत्त बंकचूल की शिष्टता से प्रभावित हो गया, इसलिए मुद्रा बदलने को राजी हो गया। बंकचूल ने दस स्वर्णमुद्राएँ दुर्गादत्त को दे दीं। दुर्गादत्त ने मुद्राएँ एक पेटी में डालकर मुनीम जी से कहा– मुनीम जी, दस स्वर्ण मुद्राओं की रजत मुद्राएँ उन्हें दे दो। मुनीम जी ने एक थैली में भरकर पूरी रजत मुद्राएँ दे दीं।

रजत मुद्राएँ लेकर बंकचूल पुनः बाजार गया तो सोचा, कमला और श्रीसुन्दरी के लिए कुछ ले चलूँ। शृंगार की एक दुकान पर उसने चूड़ियाँ बिकती देखीं। उसे हाथी दाँत के कुछ चूड़े पसंद आये, पर यह सोचकर नहीं खरीदे कि कमला और श्रीसुन्दरी श्राविकाएँ हैं। वे दोनों हाथी दाँत के चूड़े नहीं पहनेंगी। अतः काँच और लाख की कुछ चूड़ियाँ खरीद लीं। संध्या से पहले ही बंकचूल राजेश्वरी के भवन पर आ गया। समय से भोजन कर लिया। उसके पाँचों साथियों ने भी भोजन किया। फिर छहों साथी मंत्रणा करने बैठे। बंकचूल नें पाँचों साथियों से कहा –

"आज बाजार में मैंने बहुत–सी दुकानें चोरी की दृष्टि से देखीं। मदिरा की एक दुकान पर धन तो बहुत आता है, पर वहाँ दो बाधाएँ हैं। पहली यह कि मदिरा की दुकान रात के बाद तक खुली रहती है। दूसरे यह कि दुकान का मालिक पूरी रकम घर ले जाता होगा। इसके अलावा मैं दुर्गादत्त सर्राफ की दुकान पर बैठ कर आया हूँ। मैंने स्वर्ण मुद्राएँ खुलाकर रजत मुद्राएँ वहाँ से ली थीं। अब कल जाकर यह देखना है कि दुकान में प्रवेश कैसे हो? उसके बाद हम तब तक यहाँ रुकेंगें, जब तक रात को वर्षा न हो। वर्षा तो होती है, पर दिन में बन्द हो जाती है। जिस रात वर्षा होगी, उसी रात दुर्गादत्त की दुकान से आभूषण और मुद्राएँ भर लेंगे। वहाँ ज्यादा खोजबीन नहीं करनी है।"

बंकचूल ने घूम फिर कर चारों ओर से दुर्गादत्त की दुकान को देखा। दुकान के ऊपर किसी का घर था, कोई परिवार रहता था। अतः छत तोड़कर दुकान में जाने की कल्पना तक नहीं की जा सकती थी। आस–पास दूसरी दुकानें सटी थीं। पिछवाड़ा खाली नहीं था, क्योंकि दूसरी ओर खुलने वाली दुकानें थीं। हर दृष्टि से विचार करने पर बंकचूल ने पाया कि दुर्गादत्त की दुकान में प्रविष्ट होना असम्भव है।

आवास पर आकर उसने बताया–

"साथियों! दुर्गादत्त सर्राफ की दुकान में प्रविष्ट होना असम्भव है। फिर भी मुझे चोरी उसी दुकान से करनी है। मेरी समझ में एक युक्ति आई है। हमारा साथी जयन्त और दुर्गादत्त का मुनीम – इन दोनों की शक्ल मिलती–जुलती है। कदकाठी भी दोनों की एक है। मुनीम के कपड़े पहनकर यदि जयन्त गद्दी पर बैठ जाये तो सब देखने वाले यही समझेंगे कि दुर्गादत्त का मुनीम भजनलाल बैठा है। मुनीम का नाम भजनलाल है। जिस रात वर्षा होगी, उस रात हम तीन व्यक्ति जयंत को भजनलाल मुनीम बनाकर ले चलेंगे। कपड़े मैं खरीद लाया हूँ। जैसे ही दुकान बन्द होगी जयन्त मुनीम के वेश में दुकान खोलकर बैठेगा। हम लोग ग्राहक बनकर बैठेंगे। एक तो बरसात में कोई आयेगा ही नहीं। अगर कोई उधर से निकला तो

यही समझेगा कि दुर्गादत्त का मुनीम भजनलाल ग्राहकों को निपटा रहा है। आज कुछ ज्यादा ग्राहक होंगे, इसलिए अभी दुकान बन्द नहीं की। जयन्त अपनी दुकान की तरह बिना घबराये दुकान खोलेगा और अपनी ही दुकान की तरह तसल्ली से दुकान बन्द भी करेगा।"

"लेकिन यह काम तो बड़ा खतरनाक है।" बादल ने कहा – "चोर होकर हम साहूकार की तरह दुकान में बैठेंगे तो बड़ी मुसीबत खड़ी हो जायेगी।"

"चोरी करना खतरनाक खेल तो है ही।" बंकचूल ने कहा – "मैंने पहले ही बताया था कि खतरों से खेलने में मुझे बड़ा मजा आता है। मेरे साथ जयन्त, विक्रम और सागर चलेंगे।"

योजना बन गई। बड़ी खतरनाक योजना थी। खास बात यह थी कि बंकचूल नवकार मंत्र का जप करता रहता था। अगले दिन भवन की प्रबन्धिका ने बताया कि देवी राजेश्वरी आपको ऊपर के खण्ड में बुला रही हैं। जाने क्या सोचकर आज एक फूलमाला बंकचूल बाजार से ले आया था। उसने वह फूलमाला अपनी चादर में छिपा ली और प्रबन्धिका के साथ राजेश्वरी से मिलने चल दिया। एक खाली आसन पर प्रबन्धिका ने बंकचूल को बैठाया और स्वामिनी राजेश्वरी को लिवाने चली गई। राजेश्वरी आई तो बंकचूल उठकर खड़ा हो गया। उसने हाथ जोड़कर अभिवादन किया तो राजेश्वरी ने भी हाथ जोड़े और प्रत्युत्तर में नमस्कार कर बंकचूल से बैठने को कहा और स्वयं भी बैठी।

बंकचूल का भाग्य कहें या कुछ और राजेश्वरी पहली ही दृष्टि में बंकचूल को अपना हृदय दे बैठी। बंकचूल युवा और सुन्दर तथा आकर्षक व्यक्तित्व का राजकुमार था। पहले बंकचूल बोला–

"आप प्रसन्न हैं?"

"हां, मैं बहुत प्रसन्न हूँ।" राजेश्वरी ने कहा – "इस आवास पर आपको कोई असुविधा तो नहीं हुई?

"आपके दर्शनों के अलावा सभी सुख-सुविधाएँ हमे मिलीं। इसके लिए मैं सार्थवाह पुत्र हरिनन्दन आपका आभारी हूँ।"

"आपका नाम तो बड़ा अच्छा है।" राजेश्वरी ने कहा – "कहाँ से पधारे हैं?"

"उज्जयिनी से।" हरिनन्दन रूपी बंकचूल ने कहा – "यहाँ से पन्द्रह कोस दूरी पर हमारा सार्थ रूका है। बरसात की बाधा थी।"

"अजीतपुर कब तक रहेंगे?" राजेश्वरी ने पूछा– "यहाँ किस प्रयोजन से पधारे हैं?"

"आपके दर्शन भी एक प्रयोजन था।" बंकचूल बोला–"मुझे एक व्यापारी से भी कुछ काम था। अभी वहाँ है नहीं। उससे भी मिलना है।"

"आप जैसे अतिथि को पाकर मैं धन्य हुई।" राजेश्वरी ने कहा– "आप बड़े अच्छे लगे मुझे।"

"फिर तो आप मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करें।" बंकचूल ने कहा – "आप अनुमति दें तो अपनी प्रार्थना करूँ?"

"आप तो मुझे आज्ञा देने के अधिकारी हैं।" राजेश्वरी ने कहा– "प्रार्थना करना मेरा काम है और आज्ञा करना आपका अधिकार। आप आज्ञा दीजिए।"

बंकचूल ताड़ गया कि राजेश्वरी गोरी बनना चाहती है या मुझे अपना बनाना चाहती है। यह जानकर भी उसने बड़ी शालीनता और विनम्रता से कहा –

"देवी! रूप, यौवन, कविता, कला और सम्पत्ति सदा अभिनन्दनीय होते हैं। आप तो रूप, कला, यौवन, कविता और सम्पति का संगम हैं। आपका अभिनन्दन स्वर्ण और रत्नों से करना तो आपका उपहास है। अतः मैं आपके लिए एक पुष्पमाला लाया हूँ। उसे स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करें।"

राजेश्वरी मुस्कराई और बोली–

"इतनी सी बात के लिए आपने इतनी बड़ी भूमिका बनाई,

आपकी आज्ञा मुझे स्वीकार है।"

बंकचूल ने उत्तरीय में छिपी फूल माला निकाली और उसे लेकर राजेश्वरी के सामने खड़ा होकर बोला–

"लीजिए ग्रहण कीजिए।"

"मेरे बुद्धू प्रियतम आप इसे स्वयं पहनाइये।" राजेश्वरी बोली– "क्या अपनी प्रियतमा को अपने हाथों से नहीं पहनायेंगे।"

बंकचूल गद्‌गद हो गया। उसने माला पहना दी। तभी राजश्वरी ने दासी को आवाज दी कि दो पात्रों में अंगूरी मदिरा लाओ।" बंकचूल ने इन्कार किया–

"देवी, मैं मदिरापान नहीं करता।"

राजेश्वरी ने आश्चर्य से कहा –

"यहाँ आने वाले अतिथियों में आप पहले अतिथि हैं, जो मदिरा से दूर हैं। इस बात से भी मुझे गर्व हुआ है। कोई बात नहीं, दूध और मिष्ठान्न तो चलेगा?"

बंकचूल की स्वीकृति पर दासी दो पात्रों में दूध और मिष्ठान्न ले आई। फिर राजेश्वरी ने दासी से कहाः–

"आज मेरे कक्ष को सजाना। मेरी शय्या पर फूल बिछाना।" फिर बंकचूल से कहा –

"मैं आपको आज रात का निमंत्रण देती हूँ।"

बंकचूल राजेश्वरी के पास पहुँचा और बोला–

"प्रिये! आज मैं बड़े धर्म संकट में हूँ। तुम ही मुझे इस संकट से उभार सकती हो।"

"आप बिना भूमिका बनाये कोई बात नहीं कहते।" राजेश्वरी हँसकर बोली – "साधारण–सी बात की पहले बड़ी भूमिका बनाते हैं।"

"अगर बड़ी बात न मानो तो बात तो साधारण ही है।" हरिनंदन रूपी बंकचूल ने कहा – "आज मुझे एक व्यापारी से मिलने जाना है। मैं उसे आज रात को मिलने का वचन दे चुका हूँ।"

"यह तो साधारण बात नहीं है।" राजेश्वरी बोली–"आकाश में काले बादल घिरे हैं और आप मुझे ऐसी रात में अकेला छोड़ जायेंगे।?"

"यही तो धर्मसंकट है।" बंकचूल ने कहा – "एक ओर मेरा वचन, तो दूसरी ओर तुम्हारा वियोग। पर मैं रात में ही लौट आऊँगा।"

"प्रियतम! आज मेरा नृत्य होगा। कुछ धनी अतिथि आये हैं।" राजेश्वरी बोली – "मुझे उनके समक्ष नृत्य करना है। आधी रात तक का समय तो नृत्य में ही बीत जायेगा। मैं चाहती हूँ कि मेरे नृत्य के समय आप भी रहें।"

"देवी! नृत्य देखते–देखते मुझे नींद आ जाती है।" बंकचूल बोला–"नृत्य के लिए मुझे क्षमा कीजिए। नृत्य समाप्ति के बाद तो मैं आ ही जाऊँगा।"

राजेश्वरी ने अनुमति दे दी। बंकचूल ने जयन्त को दुर्गादत्त के मुनीम भजनलाल जैसे कपड़े पहनाये। अब वह एकदम दुर्गादत्त का मुनीम लग रहा था। साथ में विक्रम और सागर भी ले लिए। जयन्त, सागर और विक्रम को साथ लेकर बंकचूल खण्ड से नीचे उतरा तो वर्षा होने लगी थी। चारों साथियों ने वर्षा से बचाव वाली बरसाती चादरें ओढ़ली। जब ये दुर्गादत्त की दुकान पर पहुँचे तो पूरा बाजार बन्द हो चुका था। दुर्गादत्त का मुनीम दुकान बंद करके चाभी दुर्गादत्त को दे रहा था। दुर्गादत्त तो अपने रथ में बैठकर चल दिया और मुनीम भी अपने रथ में बैठकर चला गया। दुकान के पास जाकर विक्रम ने दुकान के तीनों ताले खोल दिये। चारों दुकान में घुस गये। जयन्त गद्दी पर बैठकर बहीखाता पलटने लगा। सागर, बंकचूल और विक्रम ने पेटियाँ खोलकर थैलियों में स्वर्णमुद्राएँ और आभूषण भर लिए। फिर इन्होंने बड़े आत्मविश्वास के साथ दुकान बन्द करके तीनों ताले ऐसे अटका दिये कि दूर से देखने पर यह लगे कि ताले तो लगे हैं।। चारों साथी राजेश्वरी के आवास पर पहुँचे। बंकचूल ने कपड़े बदले और बादल से कहा –"तुम यह धनराशि और आभूषण लेकर रातों रात निकल जाओ। वैसे तो

बरसात में कोई मिलेगा नहीं, जो यदि कोई टोके तो कहना कि मेरी माँ मरणासन्न है। अपने भाई को लेने जा रहा हूँ। इस नगर में वर्षों से चोरियाँ नहीं हुई हैं, अतः कोई यह नहीं सोचेगा कि तुम चोर हो। बरसात में जाने से यह लाभ मिलेगा कि बड़े से बड़ा खोजी घोड़ों के पदचिह्न नहीं खोज पायेगा।" बंकचूल की आज्ञा मान बादल घोड़े पर सवार होकर भाग गया। फिर बंकचूल ने अपने साथियों से कहा–

"देखा आपने, कितना खतरनाक काम कितनी आसानी से हो गया। चोर को उसकी घबराहट पकड़वाती है। बरसात की इस चोरी में उस नगर के खोजी सिर पीट–पीटकर रह जायेंगे पर खोज उनको नहीं मिलेगी। तुम चारों भी आराम करो। मैं राजेश्वरी के पास जाता हूँ।"

बंकचूल राजेश्वरी के शयनकक्ष में पहुँचा। वह अभी जाग रही थी। उसके आते ही राजेश्वरी ने कहा –

"नृत्य करते–करते थक गई थी। बड़े जोरों की नींद आ रही थी। पर नींद आपकी प्रतीक्षा में बाधक थी, अतः मैनें उसे दूर भगा दिया।"

"तुम्हारी नींद मुझे सीढ़ियों से उतरते हुए मिली थीं" बंकचूल ने परिहास में कहा – "मैनें उससे कहा – तुम जाओ, अब मैं आ गया हूँ। नींद बेचारी डरकर भाग गई।"

"आप बातें अच्छी बना लेते हैं। राजेश्वरी ने कहा – "अब लेट जाइये, कहीं मत जाना।"

7

सवेरे जब बरसात बन्द हो गई तो मुनीम भजनलाल ने दुर्गादत्त के घर से चाभी लाकर दुकान खोली। उसके साथ चार सेवक भी आये थे। भजनलाल तालों को चाभी लगा भी नहीं पाया था कि तीनों ताले अपने आप खुल गये। जब वह भीतर घुसा तो तीन पेटियाँ खुली पड़ी थीं। उनके ताले टूटे हुए थे और उनमें रखा सामान – आभूषण तथा मुद्राएँ बिखरी पड़ी थीं। मुनीम के मुँह से चीख निकल गई। उसे पसीना आ गया। उसने सेवकों से कहा – "जल्दी सेठ जी को लेकर आओ। कहना दुकान में चोरी हो गई।"

सेठ दुर्गादत्त सर्राफ कलेवा कर रहा था। दुकान में चोरी की बात सुनते ही उसके हाथ से दूध का पात्र छूट पड़ा। वह तुरन्त दुकान आया। चोरी गये सामान का जायजा लिया तो पता चला कि लाखों की चोरी हुई है। सेठ ने एक सेवक नगरक्षक (कोतवाल) के पास भेजा। नगररक्षक तुरन्त आया। उसके साथ खोजी दस्ता भी था। खोजी दस्ता कुछ भी पता न कर सका। तब सेठ दुर्गादत्त नगररक्षक के साथ राजा अजितसेन के पास पहुँचा और पूरी बात कही। सब कुछ कहने के बाद राजा ने नगररक्षक से कहा – "हमारे राज्य में और वह भी हमारी राजधानी में चोरी होना बहुत बड़ी बात है। तुम कुछ भी करो, सात दिन के अन्दर चोर और चोरी का माल पकड़ा जाना चाहिए।"

फिर राजा ने सेठ दुर्गादत्त से कहा – "सेठ जी! आप निश्चिंत होकर घर बैठो। सात दिन में आपका माल बरामद होगा और चोर को ऐसा कठोर दण्ड दूँगा कि वह अगले जन्म में भी याद रखेगा।"

इस पर दुर्गादत्त ने कहा – "पृथ्वीनाथ! मेरा धन बरामद भले ही न हो। धन तो हाथ का मैल है, फिर आ जाएगा। लेकिन चोर अवश्य पकड़ा जाना चाहिए। चोर को ऐसा ही दण्ड मिले कि वह अगले जन्म में भी याद रखे।"

"ऐसा ही होगा।" राजा ने फिर आश्वासन दिया – "चोर अवश्य

पकड़ा जाएगा।"

नगररक्षक और खोजी दस्ते ने पूरी छानबीन की पर चोर का कोई सुराग नहीं मिला। बरसात के कारण कहीं कोई चिह्न मिला ही न था। एक सप्ताह बीत गया। तभी साहसी बंकचूल ने एक ही रात में तीन बड़ी चोरियाँ और कर डालीं। ये चोरियाँ उस अकेले ने ही की थी। इतने पर भी बंकचूल में दूर–दूर तक घबराहट नहीं थी। वह राजेश्वरी के यहाँ बड़ा सामान्य रहता था। एक दिन उसने बड़े सहजभाव से राजेश्वरी से कहा – "देवी, नगर में बराबर चोरियाँ हो रही हैं। जहाँ कहीं कोई चोरी नहीं होती थी, वहाँ बड़ी चार चोरियाँ हो गई। मैं परदेशी हूँ। अपने साथ काफी धन लेकर आया हूँ। अभी तक तो यह धन अपने कक्ष में रखता था। अब आप इसे अपने तहखाने में रख दीजिए।"

राजेश्वरी ने बंकचूल द्वारा चोरी किये गये आभूषण और स्वर्ण–मुद्राएँ अपने धन के साथ सुरक्षित रख दीं। उसे किसी प्रकार का कोई शक नहीं हुआ।

कार्य अच्छा हो या बुरा, जब पुण्य प्रबल होते हैं तो पग–पग पर सफलता मिलती जाती है। बंकचूल चार चोरियों में सफल हो गया और सहज स्वाभाविक रूप से निःशंक रहने लगा, यह सब उसके प्रबल पुण्योदय के कारण हो रहा था।

उधर राजा अजितसिंह तो क्रोध से लाल–पीला हो गया। उसने नगररक्षक को बहुत फटकारा और कहा– "हमारे नगर में जितने भी मन्दिर, मदिरालय, वेश्यालय और धर्मशालाएँ हैं, सबकी तलाशी लो। जहाँ भी कोई संदिग्ध व्यक्ति मिले, उसे बन्दी बना लो। वन–उपवन भी देखो। नगर में सेना का जाल बिछा दो। जहाँ भी कोई संदिग्ध परदेशी मिले, उसे बन्दी बना लो। धरती–आकाश एक कर दो, पर चोर को पकड़ो।"

नगररक्षक ने ऐसा ही किया। तलाशी लेते–लेते वह राजेश्वरी के आवास पर भी आया। राजेश्वरी ने बंकचूल का परिचय दिया–

"ये सार्थवाह पुत्र हरिनन्दन हैं। मेरे प्रियतम और मेरे सम्मानित

अतिथि हैं। यहाँ से पन्द्रह–बीस कोस दूर इनका सार्थ ठहरा हुआ है।"

एक तो राजेश्वरी द्वारा बंकचूल को अपना सम्मानित अतिथि बताना, दूसरे बंकचूल के व्यक्तित्व का प्रभावी और आकर्षक होना। इन दो कारणों से नगररक्षक को बंकचूल पर किसी प्रकार का सन्देह नहीं हुआ।

परिणाम यह हुआ कि नगररक्षक के सारे प्रयास विफल हो गये। राजा ने उसे जब बहुत लताड़ा तो नगररक्षक ने कहा – "कृपावतार! चोर असाधारण है। मुझे लगता है कि यह कोई मांत्रिक चोर है, जो मंत्रबल से चोरियाँ करता है। हो सकता है यह चोर दूर जंगल में बैठा मंत्रबल से चोरी करता हो।"

"तो फिर नगर में ढिंढोरा पिटवा दो।" राजा ने आदेश दिया– "ढिंढोरा पिटवाकर घोषणा कराओ, जो भी व्यक्ति चोर को पकड़ेगा या उसके पकड़ने में सार्थक सहायता करेगा। उसे पाँच हजार स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार में दी जाएँगी और साथ में राज–सम्मान भी दिया जाएगा।"

राजा की यह घोषणा पूरे अजीतपुर में प्रसारित हो गई। यह घोषणा राजेश्वरी की एक दासी ने अपने आवास में खड़े होकर सुनी। वह राजेश्वरी को संवाद देने गई। वहाँ बंकचूल भी बैठा था। दासी ने बताया– "स्वामिनी, चोर कोई मांत्रिक है। मंत्रबल से चोरियाँ करता है। राजा ने घोषणा कराई है कि जो भी इस चोर को पकड़ेगा, उसे राजा पाँच हजार स्वर्ण–मुद्राएँ देगा।"

यह बात सुनते ही बंकचूल हँसा और हँसकर बोला – "राजा कितना मूर्ख है। कोई व्यक्ति चोर को पाँच हजार स्वर्णमुद्राओं में पकड़वायेगा तो चोर उसे लाखों दे देगा। क्योंकि कई लाख की चोरी करने वाला चोर अपने बचाव के लिए एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ तो दे ही देगा। तब कोई पाँच हजार के पीछे एक लाख क्यों गँवायेगा?"

"बात तो आप ठीक कहते हैं"। राजेश्वरी ने कहा – "लेकिन मांत्रिक चोर को पकड़ना असम्भव है।"

"असम्भव क्यों है?" बंकचूल ने पूछा "क्या मांत्रिक चोर व्यक्ति नहीं होगा?"

राजेश्वरी बोली – "मांत्रिक चोर अपने मंत्रबल से अदृश्य हो जाता है। वह तो सबको देखता है, पर उसे कोई नहीं देख सकता। इसीलिए अदृश्य चोर पकड़ में नहीं आ रहा।"

"अब कुछ कहा नहीं जा सकता कि चोर मांत्रिक है या तांत्रिक।" बंकचूल बोला – "इतना जरूर है कि इस चोर ने राजा अजितसेन की चौकसी और उसकी सुरक्षा–व्यवस्था को विफल करके रख दिया है। मुझे भी इतना भय है कि उस चोर के कारण मैं बाजार से कोई खरीददारी करने नहीं जा पा रहा हूँ।"

इसके बाद बंकचूल अपने कक्ष में आ गया और अपने साथियों– सागर, महापद, जयंत आदि से बातें करने लगा। उसने कहा–"तुम लोगों ने देखा कि राजा कितना परेशान है। नगररक्षक यहाँ आकर छानबीन करके चला गया, पर उसे हम पर तनिक भी शक नहीं हुआ। इसे कहते हैं सफलता।"

"लेकिन अभी तो खतरा बाकी है।" बादल ने कहा – "यहाँ से हम निकलेंगे कैसे? हम तो राजेश्वरी के आवास में कैद होकर रह गये हैं।"

"तुम देखते जाओ।" बंकचूल ने कहा – "हम पाँचों सुरक्षित निकलेंगे। विक्रम तो दुर्गादत्त के यहाँ का धन लेकर सिंहगुहा पहुँच ही गया होगा। हम पाँचों भी जायेंगे। अभी तो मुझे राजा अजितसेन से मिलना है। उससे मिलने मैं राजदरबार जाऊँगा और एक दिन राजमहल से भी चोरी करूँगा।"

"बस, इतना ही बहुत है।" जयंत ने कहा – "खतरों से खेलना तो ठीक, पर ज्यादा खेलना ठीक नहीं। राजा से मिलकर क्या करना है? किसी तरह यहाँ से जाने का उपाय सोचो।"

ये बातें हो रही थीं कि एक सेविका बंकचूल को बुलाने आ गई। बंकचूल ने कहा – "अभी तो मैं देवी राजेश्वरी के पास से आया हूँ। इतनी जल्दी पुनः क्यों बुलाया है?"

"कारण तो मैं नहीं जानती।" सेविका ने कहा – "पर देवी राजेश्वरी ने आपको बुलाया है।"

बंकचूल पहुँचा उसने देखा, राजेश्वरी घबराई हुई थी। उसने कहा – "प्रियतम, मेरे पास काफी आभूषण और मुद्राएँ हैं। मुझे डर है कि कहीं मेरे यहाँ भी चोरी न हो जाए। चोर मंत्रविद्या से अदृश्य होकर आता है।"

"अगर आपकी बात सही है तो चोर मंत्रविद्या से अदृश्य ही तो हो सकता है। लेकिन धन कहाँ रखा है यह पता करने और ताला तोड़ने में तो उसे अपनी बुद्धि और बल का प्रयोग करना ही पड़ेगा। चोर यह कैसे जानेगा कि आपका धन कहाँ रखा है फिर आपके ताले मजबूत होंगे तो उन्हें कैसे तोड़ेगा? आप मेरा विश्वास कीजिए। आपकी एक कौड़ी भी नहीं जाएगी। आप ताले मजबूत लगवा दीजिए और सावधान रहिए। कुछ नहीं होगा।"

इस तरह बंकचूल ने राजेश्वरी को आश्वस्त किया। उसे भी तसल्ली हो गई। रात को बंकचूल राजेश्वरी के शयनकक्ष में ही सोया था। नगर में अब शान्ति थी। एक दिन राजेश्वरी ने कहा – आज दिन में मेरा नृत्य होगा। नृत्य देखने राजा अजितसेन, नगररक्षक और मंत्री भी आयेंगे। मैं अभिसारिका नृत्य करूँगी। आपको भी मेरा नृत्य देखना है।"

"मेरी रुचि तो आपमें है। मैं नृत्यरसिक हूँ ही नहीं।" बंकचूल ने कहा – "मैं पहले ही कह चुका हूँ कि नृत्य देखते–देखते मुझे नींद आ जाती है।"

"आज आपको नींद नहीं आयेगी।" राजेश्वरी ने कहा –"आप रहेंगे तो मेरे पग दूने चाव से उठेंगे। आज आप राजा से भी मिल लेंगे।"

"जैसे आपकी इच्छा।" बंकचूल ने स्वीकृति दे दी – "मैं आपका नृत्य अवश्य देखूँगा, लेकिन ध्यान रखना, आपकी दासी मुझे मदिरा की जगह दूध देगी।"

यथा समय राजेश्वरी के नृत्य का आयोजन हुआ। राजेश्वरी और

बंकचूल राजा अजितसेन का स्वागत करने नीचे गये। राजा मंत्री और नगररक्षक आदि इन दोनों के साथ ऊपर आये। सभी अपने–अपने आसनों पर बैठे।

बंकचूल जान–बूझकर नगररक्षक के पास बैठा। थोड़ी देर बातें होती रहीं। परिचायिका सभी को मदिरा बाँट रही थी। उसने बंकचूल को दूध से भरा पात्र दिया तो नगररक्षक ने आश्चर्य से पूछा – "क्या आप मदिरा नहीं लेते? मुझे आश्चर्य है कि राजेश्वरी का मान्य अतिथि मदिरा नहीं लेता।"

"इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं।" बंकचूल ने परिहास में उत्तर दिया–"देवी राजेश्वरी के रूप का नशा ही इतना अधिक है कि मदिरा का नशा फीका पड़ जाता है। फिर अब इनके नृत्य का नशा भी तो चढ़ेगा।"

नगररक्षक भी हँसने लगा। बोला – "आप बड़े दिलचस्प व्यक्ति हैं।"

"लेकिन आपने तो हमारी दिलचस्पी खत्म कर दी।" बंकचूल ने कहा – "आप चोर को पकड़ नहीं पाये और उसी के भय से हम बाजार में खरीददारी करने नहीं गये।"

"ऐसी तो कोई बात नहीं।" नगररक्षक ने कहा – "अब तो हमारे नगर में शान्ति है। आप शौक से खरीददारी कीजिए।"

"नगररक्षक जी, आखिर तो हम परदेशी हैं। बड़े बाप के बेटे भी हैं। अपना सार्थ छोड़कर देवी राजेश्वरी के मेहमान बनने चले आये। सार्थ से चले तो खाली हाथ तो आये नहीं होंगे। हमारे माथे पर तो लिखा नहीं है कि हम देवी राजेश्वरी के अतिथि हैं और धनी–मानी सार्थवाह धनविलास के पुत्र हैं। आपके आरक्षियों ने परदेशी समझकर पकड़ लिया तो भले ही छानबीन के बाद आप छोड़ दें, पर हमारी गई हुई इज्जत तो वापस नहीं आयेगी। इस भय से हम राजेश्वरी के भवन से बाहर ही नहीं निकलते।"

"वैसे कहते तो आप ठीक हैं" नगररक्षक ने कहा – "लेकिन आपको देखकर किसमें साहस है जो आप पर संदेह करे। आप

बाजार जाइए। मैं दो अंगरक्षक आपके साथ कर दूँगा।"

"यह तो बाद की बात है।" बंकचूल ने कहा – "लेकिन मुझे इस बात का आश्चर्य है कि आप चोर को क्यों नहीं पकड़ पाये?"

"हरिनन्दन जी! इस चोर को पकड़ना असम्भव है।" नगररक्षक ने बंकचूल से कहा –"भला मांत्रिक चोर को कैसे पकड़ा जा सकता है?"

"आपके लिए असम्भव होगा।" बंकचूल ने कहा – "पर हमारे लिए यह काम बहुत सरल है। आप आश्चर्य न करें। हमारे साथ में बलराज और धनराज ऐसे जासूसी खोजी हैं कि चोर को पाताल से भी पकड़ लाते हैं। हमें अपने सार्थ में ऐसे चतुर खोजी रखने पड़ते हैं।"

"आप चोर को मांत्रिक कहकर उसे बढ़ावा दे रहे हैं। जब दुकानों के ताले टूटे हैं, पेटियों के ताले टूटे हैं तो क्या यह सब मंत्र द्वारा किये गये काम हैं। आप कहें तो मैं अपने सार्थ से दोनों खोजियों को बुलवा सकता हूँ।"

"आप तो बड़े काम के आदमी हैं।" नगररक्षक बोला –"मैं महाराज अजितसेन से बात करूँगा। आप अपने खोजियों को बुलवाइए।"

उधर राजेश्वरी का नृत्य शुरू हो गया। उसका अभिसारिका नृत्य बड़ा मनोहारी था। राजेश्वरी ने अपने हाव–भावों से अभिसार का रूप साकार कर दिया था। बंकचूल बार–बार राजेश्वरी की ओर देखता था और राजेश्वरी भी उसे देख लेती थी। नृत्य समाप्त हुआ तो सभी दर्शकों ने अपने–अपने स्तर से आभूषण, द्रव्य आदि उपहार स्वरूप राजेश्वरी के आगे फैंक दिए। राजा अजितसेन ने अपने कंठ का बहुमूल्य हार दिया।

यथा समय सब दर्शक विदा हो गये। राजेश्वरी अपने कक्ष में पहुँचकर वस्त्र परिवर्तन करने लगी। उसने तुरंत बंकचूल को बुलाया और पूछा – "क्या आपको नींद आई?"

"नींद जाने कहाँ गायब हो गई।" बंकचूल बोला–"मैं नहीं

जानता था कि आप इतना सुन्दर नृत्य करती हैं। मैं तो धन्य हो गया।"

"यह नृत्य मैनें आपके लिए ही किया था।" राजेश्वरी कहा – "यदि राजा के लिए करती तो आरती नृत्य करती।"

थोड़ी देर बात करने के बाद बंकचूल अपने साथियों के पास गया और बोला – "बादल, सागर, महापद और जयंत। मेरे चारों साथियों सुनो! आप लोग सिंहगुहा पल्ली में छोटी–मोटी चोरियाँ करते थे। चोरी करना एक कला है। इस कला में योग्यता प्राप्त करने वाले चोर पर कभी संदेह नहीं होता कि यह चोर है। आज नगररक्षक मुझसे बात करके गया है। तुम देखना कल राजा का बुलावा आयेगा। मैं बादल को अपने पास रखूँगा और सागर, जयंत तथा महापद को चोरी के धन–आभूषणों सहित पल्ली के लिए रवाना कर दूँगा।"

"हम तो अपने भाग्य को कोसते हैं कि आप हमें पहले क्यों नहीं मिल गये।" सागर ने कहा –"आपको घबराहट तो तनिक भी नहीं होती।"

"उस दिन मैं तो अन्दर ही अन्दर पीला पड़ गया था, जिस दिन मैं दुर्गादत्त का मुनीम भजनलाल बनकर गया था।" जयंत ने कहा– "हम तीनों को तो आप निकाल दोगे, पर आप और बादल कब आओगे?"

"मैंने सब सोच लिया है।" बंकचूल ने कहा – "अभी तो मैं राजा अजितसेन के गाल पर एक थप्पड़ भी मारूँगा, यानी उसी के राजमहल से चोरी करके उसके घमण्ड को चूर–चूर करूँगा।"

तभी राजेश्वरी की परिचारिका बुलाने आ गई। बंकचूल विश्राम करने चला गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल बंकचूल जब कलेवा कर चुका तो नगररक्षक रथ लेकर आ गया। उसने कहा कि महाराज अजितसेन ने आपको बुलाया है। बंकचूल रथ में बैठकर राजा से मिलने चला गया। राजा अजितसेन ने बंकचूल को अपने निजी कक्ष में ही बुलाया। महामंत्री भी वहाँ बैठे थे। नगररक्षक और बंकचूल यथा स्थान बैठे। राजा ने कहा– "हमारे नगररक्षक बता रहे थे कि आपके साथ ऐसे खोजी हैं, जो चतुर से चतुर चोर को भी पकड़ सकते हैं, लेकिन चोर जब मंत्रबल से चोरी करता हो तो ——।"

पृथ्वीनाथ! क्षमा कीजिए। छोटे मुँह बड़ी बात कहना उचित नहीं"। बंकचूल ने कहा – "लेकिन जब किसी का हित होता हो तो कटु सत्य भी कहना चाहिए। चोर को न पकड़ पाने की असफलता को छिपाने के लिए यह कहानी गढ़ी गई है कि चोर मांत्रिक है या मंत्रबल से चोरी करता है। आप बुद्धि लगाकर विचार करें कि जब दुकानों के ताले टूटे हैं और पेटियों के ताले तोड़े गये हैं तथा दीवारों में से रास्ता बनाया गया है तो यह काम क्या बिना हाथ लगाये हो गया। यह सब काम चोर या चोरों ने हाथ–पैरों से किया है, मंत्रबल से नहीं। हमारे खोजी बलराज का तो दावा है कि चतुर–से–चतुर चोर कोई–न–कोई ऐसी गलती करता है जो घर बैठे पकड़ा जाता है। बस खोजी की दृष्टि पैनी होनी चाहिए।"

"आप तुरन्त अपने खोजियों को बुला लीजिए।" राजा अजितसेन ने कहा – "आपके तर्क मुझे युक्ति युक्त लग रहे हैं।"

"ठीक है, कल मैं अपने सेवकों को भेजता हूँ।" बंकचूल ने कहा – "तीन–चार दिन में खोजी आ जाएँगे। हमारा सार्थ मात्र बीस कोस की दूरी पर ही तो है।"

"आप कल क्यों, आज ही भेजिए।" राजा अजितसेन ने जोर देकर कहा – "आज भेजने से एक दिन बचेगा।"

"ठीक है, मैं आज ही भेजता हूँ।" बंकचूल ने कहा – "ऐसा हो सकता है कि बलराज–धनराज दोनों खोजी न आ सकें। एक बलराज तो आ ही जाएगा। अकेला बलराज ही चोर को खोज लेगा।"

राजा ने नगररक्षक से कहा – "आप इनके साथ जाइए। इनको जिस चीज की जरूरत हो उसकी व्यवस्था करके इन साथियों को विदा करके ही आइए।"

"आप नगररक्षक को तीन घड़ी बाद राजेश्वरी के आवास पर भेज दीजिए।" बंकचूल ने कहा– "तब तक मैं सेवकों को तैयार करता हूँ।"

यह कह बंकचूल राजेश्वरी के आवास पर पहुँचा और राजेश्वरी के तहखाने से अपने सभी आभूषण तथा स्वर्ण–मुद्राएँ घोड़ों की जीन के नीचे के भाग में अच्छी तरह से रखी दीं। इस तरह से

रखी गई कि कोई भाँप भी न सके कि कुछ रखा है। ऊपर के भाग में खाने–पीने का सामान रखा था, जो स्पष्ट दिख रहा था। जयंत, सागर और महापद तीनों अपने घोड़े लिये तैयार खड़े थे। तभी नगररक्षक भी आ गया। नगररक्षक, बंकचूल और बादल;जयंत, महापद और सागर को विदा करने नगर–सीमा तक गये। फिर खड़े होकर विदा देते समय बंकचूल ने जंयत से कहा –

"सार्थ में–से बलराज और धनराज दोनों खोजियों को लेकर आना। दोनों न आ सकें तो बलराज को ही भेजना।"

"अच्छा मालिक भेज दूँगा।" यह कह जयंत ने घोड़े के एड़ लगाई। महापद और सागर ने भी अपने–अपने घोड़े दौड़ा दिए। नगररक्षक अपने आवास पर चला गया और बंकचूल बादल के साथ राजेश्वरी के आवास पर आया। ऊपर अपने कक्ष में आकर बादल हँसते–हँसते लोट–पोट हो गया। फिर अपनी हँसी रोककर बोला–"सरदार! तुम भी कमाल करते हो। न कोई सार्थ और न कोई सार्थवाह, फिर बलराज और धनराज कहाँ से आयेंगे। आप बताइए, कल्पित खोजी बलराज कहाँ से आयेगा। अब आगे क्या नाटक करेंगे?"

"बलराज न तो कहीं से आयेगा और न मुझे बुलाना है।" बंकचूल ने कहा–"तुम ही बलराज हो।"

"मैं ऽऽऽ !" बादल ने आश्चर्य से पूछा – "क्या मुझे बलराज बनाओगे?"

"नहीं बनाऊँगा तो बलराज कहाँ से पैदा करूँगा?" बंकचूल ने कहा –"समय आने दो। तुमको ही बलराज खोजी का अभिनय करना है।"

उसके बाद बादल और बंकचूल दोपहर का भोजन करने चले गये।

8

बंकचूल अब निश्चिंत था। तभी राजेश्वरी का बुलावा आया तो वह उसके खण्ड में पहुँचा। राजेश्वरी ने प्रेम भरा उलाहना दिया–

"आज पूरे दिन आपके दर्शन नहीं हुए। मेरा ख्याल तनिक भी नहीं"

"तुम्हारी छवि तो हृदय में बसी रहती है।" बंकचूल ने कहा – "पर क्या करूँ, राजा अजितसेन ने बुलाया था। राजा और नगररक्षक दोनों ही मांत्रिक चोर से परेशान हैं।"

"आपके साथी तो चले गये।" राजेश्वरी ने प्रसंग बदला–"क्या आप भी जाओगे?"

"प्रिये, मेरे साथियों को पड़ाव की याद आ रही थी। इनकी इच्छा जाने की थी, सो मैनें उन्हें भेज दिया।" बंकचूल ने कहा – "प्रिये जो आयेगा, वह जायेगा जरूर। बस आगे पीछे की बात है। कोई आगे जाता है तो कोई पीछे। मैं भी जाऊँगा। लेकिन चार दिन बाद पुनः लौट आऊँगा तुम्हारे बिना मैं रह भी तो नहीं सकता।"

राजेश्वरी प्रसन्न हो गई। प्रसन्न मन बोली–"जब तक चोर पकड़ा न जाए।"

बंकचूल ने कहा –"राजा और नगररक्षक को भरोसा है कि मेरी सूझबूझ से चोर अवश्य पकड़ा जाएगा।"

"आपको भरोसा है कि आप चोर पकड़ लेंगे?" राजेश्वरी ने कहा – "यदि ऐसा हो गया तो मेरा भी नाम होगा कि राजेश्वरी के यहाँ ठहरे अतिथि श्रेष्ठिपुत्र हरिनन्दन ने चतुर–चालाक और मांत्रिक चोर को भी पकड़ लिया।"

कितना चतुर था बंकचूल। वेश्याएँ धन के लिए प्रियतम बनाती है। बड़े–बड़े श्रेष्ठी, सामन्त, राज पुरुष राजेश्वरी के आगे धन का ढेर लगा देते थे, पर यहाँ बंकचूल राजेश्वरी को एक कौड़ी भी नहीं देता था। उल्टे उसी का खर्च कराता था।

बंकचूल की यह रात बीती कि दूसरे दिन नगररक्षक रथ लेकर आया। वह बंकचूल से मिला और पूछा–

"आपका खोजी बलराज कब तक आयेगा?"

"कल तो गया ही है।" बंकचूल ने कहा – "आपको कल ही बताया था, कि तीन–चार दिन लगेंगे। फिर आज क्यों पूछ रहे हैं?"

"सेठ जी! कल रात चोरी की एक विचित्र घटना घट गई है।" नगररक्षक ने विस्तार से घटना के बारे में बताया – "कल रात श्रेष्ठी जयचन्द के यहाँ चोर आया। उसने ताला तोड़ने की कोशिश की। ताला तोड़ने की चोर की आवाज सुनकर सब जाग गये। लेकिन इसमें आश्चर्य की बात यह है कि चोर की परछाई तक नहीं दिखी। इससे लगता है, चोर मंत्रबल से अदृश्य हो जाता है।"

"अब तो मुझे भी लगता है कि चोर मांत्रिक है।" हरिनन्दन बने बंकचूल ने कहा –"आप यह बतायें कि ताले पर हथौड़ा या छैनी के चोट के निशान हैं।"

"आप चलकर स्वयं देखें।" नगररक्षक ने कहा – "मैं इसीलिए आया हूँ कि आप घटनास्थल का निरीक्षण करके कोई सुराग देखें।"

बंकचूल नगररक्षक के साथ रथ में बैठकर श्रेष्ठी जयचन्द की हवेली पर गया। उसने ताले का निरीक्षण किया तो देखा ताले पर चोट का कोई निशान नहीं है। उसने नगररक्षक से पूछा –

"क्या श्रेष्ठी ने ताले पर चोट पड़ने की आवाज सुनी थी?"

श्रेष्ठी जयचन्द वहीं खड़ा था। उसने कहा – "आवाज सुनकर ही तो हम लोग जागे थे। हम सभी ने ठक–ठक की जोरदार अवाज सुनी। आवाज कई बार हुई। जब हम यहाँ आये तो चोर भाग गया। लेकिन दूर–दूर तक चोर की परछाई भी नहीं थी।"

बंकचूल कुछ देर सोचने का अभिनय करता रहा। फिर बोला–

"चोर ने ताले की बगल में चोट की है। इसीलिए ऊपर निशान नहीं बना। लेकिन चोर तो प्रायः आवाज किये बिना किसी बनी–बनाई चाभी से ताला खोलते हैं, जिससे कोई जागे नहीं। हमारे खोजी

बलराज ने कई चोर पकड़े तो वे चोर ही बता रहे थे कि हम लोग ताला खोलते हैं, तोड़ते नहीं।"

"नगररक्षक जी! मुझे आशंका है कि ऐसा निडर, निर्भीक और मायावी चोर राजकोष की चोरी भी कर सकता है। मैं राजकोष का निरीक्षण भी करना चाहता हूँ।"

"चलिए आप मेरे साथ ही चलिए।" नगररक्षक ने कहा – "महाराज अजितसेन आपको याद भी कर रहे थे।"

हरिनन्दन रूपी बंकचूल नगररक्षक के साथ राजा के पास पहुँचा। राजा ने उसका स्वागत किया। नगररक्षक ने राजकोष की स्थिति दिखाने की बात कही तो राजा उठकर चल दिया। साथ में नगररक्षक, महामंत्री, कोषाध्यक्ष भी थे। राजमहल के दक्षिण भाग में राजकोष था। उसी ओर वाटिका थी। राजकोष की दीवारें मजबूत थीं। ताले भी मजबूत थे। बंकचूल ने पूछा :–

"यहाँ रात को कितने चौकीदार रहते हैं?"

"दो रहते हैं।" राजा ने कहा – "दो वाटिका में रहते हैं, जिससे कोई चोर वाटिका से न आने पाये।"

"आप दो चौकीदार और बढ़ा दीजिए। "बंकचूल ने कहा – "बरसात की रात या अँधेरी रात में चोर की परछाई नहीं पड़ेगी। अतः आप वाटिका में तीन दीपक इस तरह जलवाइए कि बरसात की या अँधेरी रात में दीपकों का प्रकाश राजकोष की दीवारों पर पड़े और तालों पर भी पड़े। इससे चोर एक हो या दो, उनकी परछाई चौकीदारों को स्पष्ट दिखेगी।"

इस नये सुझाव से राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने बंकचूल को धन्यवाद दिया –

"श्रेष्ठ हरिनन्दन जी, आप बड़े दूरदर्शी हैं। परछाई देखने के लिए प्रकाश की व्यवस्था का आपका सुझाव बहुत सुन्दर है।"

मुझसे ज्यादा दूरदर्शी तो मेरा खोजी बलराज है।" बंकचूल ने कहा – "उसे आने तो दीजिए।"

बंकचूल ने बड़ी चतुराई से निरीक्षण करके देख लिया कि भवन वाटिका की दीवार फाँदकर रात को राजकोष तक आया जा सकता है। उसने जाने की आज्ञा माँग और सीधा राजेश्वरी के आवास पर पहुँचा। राजा अजितसेन, नगररक्षक और महामंत्री – तीनों ही बंकचूल की शिष्टता, वाक्पटुता और उसके व्यक्तित्व से इतने प्रभावित थे कि उस पर किसी प्रकार का संदेह हो ही नहीं सकता था।

बंकचूल ने बादल से बातचीत की और उसे समझाया कि अब वह दिन आने ही वाला है, जब उसे खोजी बलराज बनना है। बंकचूल ने बादल को हर पहलू से समझा दिया कि बलराज बनने के बाद बादल को कब और क्या करना है। उसने बताया–

"बादल तुमको ऐसा सटीक अभिनय करना है कि राजा–मंत्री और नगररक्षक यह समझें कि तुम बहुत बुद्धिमान खोजी हो।"

"मैंने हर बात समझ ली है।" बादल ने कहा – "कहीं कोई चूक हो जाए तो आप कुछ कहकर भूल–चूक का संकेत कर दें।"

"नहीं, तुमको अपना आत्मविश्वास जगाना है।" बंकचूल ने कहा – "आत्मविश्वास के बिना अभिनय पकड़ में आ जाता है।"

"तो मुझे बलराज कब बनना है?" बादल ने पूछा – "मुझे तो अपने सार्थ के पड़ाव से आना होगा, सो कैसे आ सकूँगा, क्योंकि यहाँ से बाहर जाना तो सम्भव नहीं है।"

"जिस दिन रात को जोरदार वर्षा होगी, उसके दूसरे दिन तुमको बलराज बनना है।" बादल ने कहा – "पड़ाव से आने की युक्ति मैं उसी रात बता दूँगा। बरसात की रात को मैं राजकोष की चोरी करूँगा।"

बंकचूल ने बाजार से दो जोड़ी कपड़े बनवाए और नकली मूँछे भी खरीद लीं। एक जोड़ी कपड़े राजा के चौकीदार के बनवाये और दूसरी जोड़ी बादल को बलराज बनने के बनवा दिए।

एक रात जोरदार वर्षा होने लगी। बंकचूल राजेश्वरी के पास लेटा था। उसके पास बेहोश करने की सुंघाने वाली जड़ी थी। उसने

राजेश्वरी को वह जड़ी सुंघा दी तो वह बेहोश हो गई। बंकचूल ने राजकोष की चौकसी करने वाले चौकीदार के कपड़े पहने और राजमहल की ओर चल दिया। वह वाटिका में कूद गया। बरसात से बचने के लिए दो चौकीदार एक छाजन के नीचे बैठे थे। वह उन चौकीदारों के पास पहुँचा और उनको जड़ी सुँघाकर बेहोश कर दिया। साथ ही टिमटिमाते दीपकों को भी बुझा दिया। वह राजकोष की दीवार के पास गया और अपने पास से काँटेदार पहियों का एक यंत्र निकाला। उसके आगे की भालेनुमा नोक दीवार से लगाकर उसे घुमाया तो दीवार में छेद होता चला गया। उसी यंत्र से छेद इतना बड़ा किया कि खजाने के भीतर घुसा जा सके।

बंकचूल राजकोष में घुस गया। भीतर अंधेरा था। चकमक पत्थर रगड़कर प्रकाश किया और एक पेटी में से रत्नालंकार निकाल कर अपन झोली में भर लिए। फिर वह वाटिका के बाहर निकला और राजेश्वरी के आवास पर आ गया। बादल उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। बंकचूल ने उसे समझाया –

"काम हो गया। अजीतपुर की यह अन्तिम चोरी थी। तुम अपने बलराज के कपड़े बदल कर तैयार रहो। सवेरे शौच जाने के बहाने बाहर जाना। मुझे सवेरे नगररक्षक बुलाने अवश्य आयेगा। हम दोनों थोड़ी देर द्वार पर खड़े होकर बातें करेंगे, तभी तुम मेरी तरफ आ जाना।"

बादल को सब बातें समझाकार बंकचूल ने कपड़े बदले और राजेश्वरी के पास जाकर लेट गया। उधर सवेरा होते ही बादल बाहर निकल गया। राजेश्वरी अभी सो रही थी। सवेरा हुआ तो बंकचूल ने शय्या त्याग दी। तभी एक सेविका ने सूचना दी –

"सेठ जी, नगररक्षक आये हैं।"

"उन्हें ऊपर ले आओ।" बंकचूल ने आदेश दिया – "उन्हें जलपान कराना।"

नगररक्षक ने आते ही कहा –

"सेठ जी, अनहोनी हो गई। गजब हो गया।"

"क्या हो गया?" बंकचूल ने कहा – "संसार में अनहोनी कुछ भी नहीं होती। आखिर हुआ क्या?"

"राजा के खजाने की चोरी हो गई।"

"क्या SSS! खजाने की चोरी? यह तो अनहोनी ही है। इतने मजबूत ताले और चोरी?"

"चोर ने ताले नहीं तोड़े।" नगररक्षक ने कहा – "उसने दीवार में प्रवेश द्वार बना लिया।"

"आप चलकर स्वयं देखें।" नगररक्षक ने कहा – "महाराज अजितसेन क्रोध से पागल हो रहे हैं। उनके खजाने से चोरी करके चोर ने उनके मुँह पर थप्पड़ मारा है।"

"आप चिन्ता न करें। आने दो बलराज को।" बंकचूल ने कहा– "एक दिन चोर उनके कदमों में होगा और राजा से प्राणों की भीख माँगेगा।"

"तो फिर जल्दी चलें।" नगररक्षक अधीर होकर बोला – "राजा ने कहा है, आप जैसे बैठे हों, मैं आपको ले चलूँ।"

"फिर भी मुझे नित्य कर्म तो करने दीजिए।" बंकचूल ने कहा– "आप बस घड़ी भर बैठिए, मैं तैयार होता हूँ।"

बंकचूल तैयार होकर नगररक्षक के साथ खण्ड से नीचे उतरा और रथ के पास खड़ा होकर नगररक्षक से बातें करने लगा। तभी उसने बलराज के वेश में बादल को आते देखा। जब वह कुछ पास आया तो बंकचूल ने खुश होकर कहा –

"बलराज! तुम कब आये?"

"अभी चला आ रहा हूँ।" बलराज रूपी बादल ने कहा – "रातभर चला हूँ। आपका आदेश था कि जल्दी आना।"

"ठीक किया।" बंकचूल बोला–"तुम्हारा घोड़ा कहाँ है?"

बलराज रूपी बादल ने बताया–

"एक पांथागार में बाँध आया हूँ।"

"अच्छा तो तुम ऊपर चलो।" बंकचूल ने कहा – "तुम्हारे नहाने–धोने और खाने–पीने की व्यवस्था कर दूँ।"

"इन्हें भी साथ ही ले चलिए।" नगररक्षक ने कहा – "सब व्यवस्था वहीं हो जाएगी।"

नगररक्षक के साथ बादल और बंकचूल रथ में बैठे। बंकचूल बलराज रूपी बादल से पड़ाव के हाल पूछने लगा। चलते–चलते राजमहल आ गया। तीनों राजा के पास पहुँचे। बंकचूल ने बादल का परिचय दिया–

"यही है हमारा खोजी बलराज। अभी आया है।"

फिर बलराज से कहा –

"बलराज! अपनी पूरी ताकत लगाकर इस चालाक चोर को पकड़ना है।"

"चोर चालाक न होता तो बरसात की रात को चोरी करता ?"। बलराज ने कहा – "लेकिन मेरा नाम भी बलराज है। मैं बरसात में चोरी करने वाले चोर को भी खोज लेता हूँ।"

यह कह बलराज घटनास्थल का निरीक्षण करने लगा। उसने दीवार में बने गोलाकार प्रवेश द्वार को देखा। वहाँ की मिट्टी को देखा। फिर राजा से पूछा –

"आपके चौकीदार कहाँ थे?"

राजा ने स्थान बताया – "यहाँ थे।"

"आप चौकीदारों को बुलवाइए।" बलराज ने कहा तो एक सेवक वाटिका के दोनों चौकीदारों को बुला लाया। अब बलराज ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी –

"आप दोनों जाग रहे थे?"

"जी हाँ, जागना ही तो हमारा काम है।"

"तो फिर तुमने कुछ देखा?"

"नहीं, हमारे सामने कोई नहीं आया।"

"तुम झूठ बोलते हो।" बलराज ने कहा – "चोर ने तुम दोनों को बेहोश किया है। सच बोलोगे तो मेरा काम आसान हो जाएगा। सच–सच बताओ।"

"हम दोनों बेहोश ही पड़े थे।" चौकीदारों ने कहा "हम तो सवेरा होने पर जागे हैं।"

राजा ने बलराज को शाबाशी दी–

"वाह बलराज वाह! तुमने एक सच्चाई तो सामने ला दी।"

"अब मैं आया हूँ तो कुछ करके ही जाऊँगा।" बलराज ने कहा – "जब तक जीवित रहेंगे, सेठ हरिनन्दन को याद रखेंगे कि कोई श्रेष्ठिपुत्र आया था। मुझे कुछ–कुछ अनुमान हो गया है।" बलराज कहता चला गया – "चोर का ठिकाना नगर से बाहर नदी किनारे कहीं है। यहाँ से तीन कोस के दूरी का अनुमान है मेरा।"

"आपने ठीक कहा" नगररक्षक बोला – "नदी यहाँ से तीन कोस दूर ही है।"

"चोर चोरी के माल को नदी के पास ही कहीं छिपाता है।" बलराज बोला–"वह यह जानता है कि आप सब जगह वन–उपवन, मन्दिर, धर्मशाला, वेश्यागृह आदि स्थानों में खोज करेंगे, पर नदी किनारे नहीं जायेंगे।"

"आपने यह बात भी ठीक कही है। नगररक्षक बोला– "नदी किनारे हम कभी नहीं गये।"

"तो आज चलिए।" बलराज ने कहा – "हम तीनों पैदल ही चलेंगे।"

"मैं भी आपके साथ चलूँगा।" राजा अजितसेन ने कहा – "यदि चोर अभी मिल जाए तो उसे मजा चखा दूँ।"

"आपके जाने से बना–बनाया काम बिगड़ जाएगा।" बलराज ने कहा – "पहले हम कुछ निशान देखने जा रहे हैं। फिर चोर के ठिकाने पर पहुँचकर उसे दबोच लेंगे।"

बलराज (बादल), बंकचूल और नगर रक्षक पैदल ही नगर से

बाहर तीन कोस चले। जब तीनों नदी किनारे पहुँच गये तो बलराज ने नगर सेठ से पूछा –

"यहाँ कहीं आस–पास या कुछ दूर कोई खण्डहर है?"

"हाँ है।" नगर रक्षक ने बताया–"यहाँ से कोस भर दूर है।"

"बस तो काम बना ही समझो।" बलराज ने कहा – "यहाँ से लौट चलो। चोर को हमारे आने का आभास नहीं होना चाहिए। कल हम तीनों व्यापारी के वेश में यहाँ आयेंगे। भोजन–पानी यहीं करेंगे हो सका तो रात को खण्डहर में रुकेंगे। आगे की शेष बातें कल ही बताऊँगा।"

तीनों लौट आये। नगर रक्षक राजा के पास चला गया और बलराज तथा बंकचूल राजेश्वरी के आवास पर पहुँचे। नगर रक्षक ने राजा से कहा :–

"हरिनन्दन का खोजी बलराज बहुत बुद्धिमान है। मुझे भरोसा है कि कल चोर पकड़ा जा सकता है।"

"मुझे भी लगता है कि बलराज बहुत चतुर खोजी है।" राजा ने कहा –"चोर पकड़े जाने पर जितना बड़ा दण्ड चोर को दूँगा, उससे बड़ा पुरस्कार बलराज को दूँगा।"

इधर बंकचूल ने बादल से कहा –

"वाह बादल वाह! तुमने बड़ा सफल अभिनय किया।"

"कौन बादल, कहाँ का बादल?" बादल हँसकर बोला – "आप बलराज से बातें कर रहें हैं, किसी बादल से नहीं। अब मुझे बादल कभी मत कहिए।"

"नहीं कहूँगा बलराज जी।" बंकचूल भी हँसा – "अब तैयारी करो। मैं राजेश्वरी के पास जाता हूँ। आज उससे मेरा आखिरी मिलन होगा कल तो हम चले ही जाएँगे।"

दूसरे दिन सवेरे बंकचूल और बलराज रूपी बादल व्यापारियों के वेश में तैयार हो गये। बंकचूल ने राजेश्वरी से विदा ली –

"प्रिये! आज मैं अपने साथी बलराज को लेकर नगर रक्षक के

साथ चोर को पकड़ने जा रहा हूँ। चोर को नगर रक्षक के हवाले कर मैं अपने पड़ाव पर चला जाऊँगा और चार दिन बाद पुनः लौटूँगा।"

"ये चार दिन चार वर्षों के बराबर बीतेंगे।" राजेश्वरी ने कहा– "लौट आना। अगर मेरी सेवा में कुछ कमी रही हो तो भुला देना।"

"अपनों से कभी कोई कमी होती ही नहीं।" बंकचूल ने कहा– "तुम मुझे बहुत याद आओगी।"

यों राजेश्वरी से विदा लेकर बंकचूल नीचे उतरा। दोनों घोड़े तैयार खड़े थे। बंकचूल ने अपने घोड़े पर राजकोष से चुराये रत्नाभूषण रख लिये थे। वे बड़े यत्न से रखे थे। दूसरा घोड़ा बलराज का था, उस पर खाने–पीने का सामान था। वादे के अनुसार नगररक्षक से कहा –

"आप और मैं घोड़ों पर चलेंगे। बलराज हमारे आगे–आगे खोज देखते हुए पैदल चलेगा। आप अपना रथ यहीं छोड़िए और बलराज के घोड़े पर बैठिए।"

नगर रक्षक बलराज के घोड़े पर बैठा और बंकचूल अपने घोड़े पर, बलराज आगे–आगे पैदल चल रहा था। आगे जाकर सैनिकों ने इन तीनों को रोका :–

"आप लोग कौन हैं, कहाँ जा रहे हैं? कोई भी अपरिचित हमसें बचकर नहीं जा सकता। कहीं तुम लोग राजकोष की चोरी करने वाले चोर तो नहीं हो?"

"तुम सावधान हो, इसकी मुझे खुशी है, पर अब मुझे पहचान लो।"

"सैनिकों ने नगर रक्षक को पहचाना तो क्षमा माँगी और जाने दिया। ये तीनों तीन कोस की दूरी पार कर गये। पैदल चलने के कारण बलराज थक गया था। उसने कहा –

"यहाँ बैठकर भोजन कर लें, फिर आगे खण्डहर की ओर चलेंगे। मुझे खोज मिल गये हैं। चोर कहीं मिलेगा।"

बंकचूल और नगर रक्षक घोड़ों से नीचे उतरे। बलराज ने अपने घोड़े से भोजन उतारा और एक चादर बिछाकर तीनों भोजन करने लगे। भोजन करते–करते नगर रक्षक ने पानी माँगा तो बंकचूल ने बलराज से कहा–

"अरे बलराज! तुमने पानी की झारी नहीं उतारी। जाओ, घोड़े पर पानी की झारी है, लेकर आओ।"

बलराज पानी ले आया। नगर रक्षक ने पानी पिया कि पानी पीने के दस-बीस क्षण बाद ही नगर रक्षक को चक्कर आया और वह बेहोश होकर वहीं सो गया। बंकचूल और बलराज रूपी बादल घोड़ों पर बैठकर नौ दो ग्यारह हो गये। वे सिंहगुहा पल्ली की ओर बढ़े जा रहे थे।

जब संध्या हुई तो नगर रक्षक को होश आया। वहाँ न हरिनन्दन था और न बलराज। सोचा कि कहीं ये दोनों खण्डहर की ओर न गए हों। फिर ख्याल आया कि पानी पीते ही मैं गिर गया था। धीरे–धीरे चलकर नगर रक्षक नगर में पहुँचा और सीधा राजभवन जाकर राजा से मिला। पूरा वृतान्त सुनाकर बोला–

"राजन! वह हरिनन्दन ही चोर था। हम सबको मूर्ख बना गया।"

"इसको तो राजेश्वरी ने शरण दी थी। उससे पूछो कि उसने चोर को क्यों शरण दी।"

"इसमें उस बेचारी का क्या दोष" नगररक्षक ने कहा – "जब हम जैसे धोखा खा गये। उसकी शिष्टता और वाक्पटुता के झाँसे में आ गए तो बेचारी गणिका नर्तकी धोखा क्यों न खाती?"

अजीतपुर के राजा अजित सिंह का मान मर्दन हो गया। बहुत दिनों तक वह खीझता और पछताता रहा।

9

कमला देवी और श्रीसुन्दरी भाभी और ननद आपस में बातें कर ही थीं श्रीसुन्दरी ने कहा –

"भाभी! हम दोनों का प्यार भी भैया को सत्पथ पर नहीं ला पा रहा। वे अजीतपुर नगर चोरी करने गये हैं। बीस दिन से ऊपर हो गये, जानें कब लौटेंगे?"

"पता नहीं, उनका ऐसा कौन-सा प्रबल संस्कार है, जो चोरी को पाप स्वीकार नहीं करने देता।" कमला ने कहा– "दूसरे की वस्तु उससे छिपाकर ले लेना पाप नहीं तो क्या है? पर वे इसे कला मानते हैं साहस और बुद्धि का खेल समझते हैं।"

"साहस–बुद्धि वाली उनकी बात सही है।" श्रीसुन्दरी बोली– "पर साहस और बुद्धि का उपयोग अच्छे कामों में ही करना चाहिए। मैं तो निराश हो चली हूँ। यह तो सत्य–असत्य का संघर्ष है। हम दोनों सत्य की ओर हैं और भैया असत्य की ओर खिंचे जा रहे हैं।"

"ननद रानी, तुम निराश क्यों होती हो?"

कमला ने श्रीसुन्दरी से कहा – "सत्य–असत्य के संघर्ष में भले ही पहले असत्य विजयी प्रतीत होता हो। पर परिणाम पर प्रतीक्षा की आँखें धैर्यपूर्वक लगाये रहने से कुछ ही समय में पता चल जाता है कि वास्तविकता क्या है। क्योंकि समय बड़ा बलवान होता है, तुम देखना तुम्हारे भैया एक दिन धर्मनिष्ठ मानव बनकर लौटेंगे और पूरी धनपुरी नगरी उनको सिर आँखों पर बिठायेगी।"

इस तरह ननद–भाभी बंकचूल को बिना अपना समय काट रही थीं। सागर, जयंत, विक्रम और महाफल–बंकचूल के चार साथी चोरी का धन स्वर्णमुद्राएँ और रत्नाभूषण लेकर कई दिन पहले सिंहगुहा पल्ली आ चुके थे। उन्होंने बंकचूल के सभी कुशल समाचार कमला और श्रीसुन्दरी को बता दिये थे। यह भी बताया कि बंकचूल राजा के खजाने की चोरी का अपना संकल्प पूरा करके बादल के साथ आयेंगे। इन्हीं लोगों से कमला यह भी जान गई थी कि उसका पति बंकचूल अजीतपुर में राजेश्वरी वेश्या का प्रियतम बना हुआ है।

एक दिन बंकचूल और बादल भी आ पहुँचे। कमला और श्रीसुन्दरी ने बंकचूल का स्वागत किया। दोनों ओर से शिकवा–शिकायतें हुईं। कमला ने राजेश्वरी के संग साथ रहने का रोष भरा ताना भी दिया। तब बंकचूल ने उसे समझाया कि प्रिये, यह तो मेरी विवशता थी मजबूरी में किया गया पाप, पाप नहीं होता।

"ऐसी कोई मजबूरी हो ही नहीं सकती, जो पाप करने को बाध्य करे।" कमला ने कहा – "यदि मुझे अकेला ही रहना होता तो सास–श्वसुर के पास धन्यपुरी नहीं रहती? अब मैं आपको कहीं नहीं जाने दूँगी।"

"अब मुझे साल–डेढ़ साल कहीं नहीं जाना।" बंकचूल ने कहा– "पल्ली का सरदार होने के नाते मेरी जिम्मेदारियाँ काफी बढ़ गई हैं। काफी धन लाया हूँ। इसे ठिकाने लगाना है।"

"आप चोरी के धन से पल्ली को समृद्ध बनाना चाहते हैं?" कमला ने कहा – "आखिर आप कब समझेंगे कि कर्मों का बंध तो आसान है, पर उनका भोग बड़ा कठिन है?"

"प्रिये! मैं पहले ही कह चुका हूँ कि तुम मुझे चोरी छोड़ने को नहीं कहोगी।" बंकचूल ने कहा "चोरी यदि रोजी–रोटी का साधन बनाया जाये तो गलत है। उसे एक कला के रूप में लेना चाहिए और अपनी सूझ–बूझ, चतुराई का प्रयोग करके चोरी में सफल होना चाहिए।

"प्रिये! यहाँ के लोग एक धन्धे के रूप में चोरियाँ करते थे। वे चोरियाँ मैंने बंद करा दीं। अब सब लोग खेती और पशुपालन करते हैं।"

कमला मौन हो गई। एक दिन बंकचूल ने गांव वालों को इकट्ठा कर उन्हें समझाया कि तुम लोग खेती करके अन्न उपजाते हो, यह अच्छी बात है। मैं इस पल्ली को एक खुशहाल, समृद्ध और आदर्श गाँव बनाऊँगा। पहले लोग इधर आने से डरते थे, बचकर निकल जाते थे। अब सबका भय निकल गया। अब यहाँ नाटक मण्डलियाँ आकर लोगों का मनोरंजन किया करेंगी। आपके बच्चे शिक्षा प्राप्त करें, उसके लिए एक अध्यापक यहाँ बसाऊँगा। उसके अतिरिक्त लुहार,

बढ़ई, वैद्य, धोबी, कुम्हार, पण्डित, नाई आदि के परिवार भी बसाऊँगा।

पल्ली के सभी लोग गद्‌गद थे। बंकचूल ने अजीतपुर में पाँच बड़ी चोरियाँ की थीं। वह सभी आभूषणों को लेकर उनके बदले स्वर्णमुद्राएँ लेने चम्पा, चन्द्रपुर आदि ग्रामों में बादल, जयंत और सागर को लेकर गया। इस बार वह उज्जयिनी नहीं गया। स्वर्णमुद्राएँ प्राप्त कर बंकचूल ने पल्ली की कांटेदार बाड़ को चारों ओर से पक्की दीवार में बदल दिया। कुछ नये घर भी बनवाये, जिनमें कुम्हार, सुनार, लुहार आदि रह सकें। एक बड़ी सी दुकान भी बनवा दी, जिसमें जरूरत की सभी चीजें मिल सकें। उस दुकान को चलाने के लिए एक वणिक् को बसाने का भी विचार बनाया।

बंकचूल ने नदी किनारे प्राचीन जीर्ण जिनालय और उपाश्रय को भव्य और आकर्षक बना दिया। दो बार के चौमासे बीत गये। तीसरी बार की वर्षा ऋतु आई तो संयोग से धर्मप्रभ नाम के एक आचार्य अपने चार शिष्यों के साथ पधारे। बंकचूल चूंकि जैन कुल में जन्मा था, माता–पिता के जैन संस्कारों का अज्ञात प्रभाव उस पर था ही। इसलिए उसने भक्ति भाव से मुनियों की वंदना की। कमला और श्रीसुन्दरी ने भी वंदन किया। पल्ली वालों के लिये तो ये जैन श्रमण एक कुतूहल थे। इससे पहले उन्होंने ऐसे साधु नहीं देखे थे। फिर भी उन्होंने अपने सरदार बंकचूल का अनुकरण कर साधुओं की वन्दना की। आचार्य धर्मप्रभ ने बंकचूल से कहा –

"हे भव्य! हम जैन साधु वर्षा ऋतु में विहार नहीं करते। अतः हम यहाँ से आगे नहीं जा सकते। तुम हमारे ठहरने की व्यवस्था कर सकते हो क्या?

"हे मुनिवर! चर्मण्यवती नदी के किनारे एक सुन्दर प्राचीन जिनालय है, उपाश्रय भी है। आप चार महीने वहाँ ठहरें। गोचरी के लिए आप यहाँ पधारें।" बंकचूल ने कहा – "लेकिन इसके लिए आपको मेरी एक शर्त माननी होगी।"

आचार्य के पूछने पर बंकचूल ने अपनी शर्त बताई – "शर्त यह है कि आप ऐसी धर्म देशना नहीं देंगे, जिसमें चोरी, जुआ, मदिरा आदि छोड़ने की बात कही जाए।"

आचार्य धर्मप्रभ यह शर्त सुनकर बड़े आश्चर्य में पड़ गये। जीव मात्र का कल्याण करने वाले साधुओं को यह शर्त बताई जा रही है कि वे लोगों के कल्याण की बात यहाँ न करें। लेकिन विहार न करना उनकी मजबूरी थी। अतः आचार्यश्री ने बंकचूल की शर्त मान ली। आचार्य और अन्य साधु ठहर गये। पल्ली के लोग, बंकचूल आदि उनके दर्शन और वंदना को जाते थे। साधु उन्हें मंगल पाठ सुनाते, पर कोई उपदेश नहीं देते थे। एक दिन कमला ने ननद श्रीसुन्दरी से कह दिया --

"साधु महाराज कोई उपदेश न दें, पर इनका स्वयं का जीवन, इनकी रहनी, जीता-जागता उपदेश है। इसका प्रभाव भी लोगों पर पड़ेगा। गंधी यद्यपि कुछ न दे, पर उसके पास बैठने वाले को सुगन्ध तो मिलती ही है।"

आचार्य धर्मप्रभ के शिष्य गोचरी के लिए बहुत कम आते थे, क्योंकि आचार्य सहित पाँचों साधु, उपवास अधिक करते थे और अपना समय जप, तप, ध्यान एवं स्वाध्याय में देते थे। इसी क्रम में चातुर्मास समाप्त हो गया। साधुओं ने सिंहगुहा पल्ली से आगे को विहार किया। पल्ली के कई लोग सीमान्त तक उनको छोड़ने गये और लौट आये। लेकिन बंकचूल उनके साथ काफी दूर तक, दो कोस तक गया। तब आचार्य धर्मप्रभ ने कहा-"तुम हमारे साथ बहुत दूर आ गये हो, अब लौट जाओ।"

बंकचूल ने कहा -- "महाराज! मैंने अपनी माँ से नवकार मंत्र का नियम तो ले रखा है। आप मुझे कुछ ऐसे नियम दिला दीजिए, जिनमें चोरी करने में बाधा न पड़े।"

विचार करने के बाद आचार्य ने कहा --

"ऐसे नियम मैं दिला दूँगा व उनका पालन चोरी करने में भी कभी बाधक नहीं होगा। फिर भी विचार कर लो कि नियमों का पालन कर सकोगे न?"

"यदि चोरी में बाधा न पड़े तो मैं ऐसे हजार नियमों का पालन प्राण देकर भी करूँगा।" बंकचूल ने बड़ी दृढ़ता से कहा -- "आचार्यश्री, मेरे प्राण जा सकते हैं पर नियम पालन नहीं जायेगा।" क्षत्रिय पुत्र

हूँ, अपने वचन का पक्का हूँ।"

आचार्य धर्मप्रभ आश्वस्त हो गये और बोले :–

"वत्स! मैं तुमको मात्र चार नियम दिला रहा हूँ। **पहला नियम यह है कि कभी भी अज्ञात फल नहीं खाओगे।** जिस फल के बारे में तुम नहीं जानते, उस फल को कभी न खाना। इस नियम से तुम्हारे चौर्य कर्म में कोई बाधा नहीं आयेगी। **दूसरा नियम यह कि जब क्रोधावेश में किसी व्यक्ति पर वार करो तो वार करने से पहले पाँच कदम पीछे हटकर आधी घड़ी विचार कर लेना....**

"ये दोनों नियम बड़े सरल हैं।" बंकचूल ने कहा – "शेष दो नियम और बताइये।"

आचार्य श्री ने कहा –

"तीसरा नियम यह है कि कुमारी कन्या और पराई स्त्री के साथ रमण नहीं करोगे। चौथा और अन्तिम नियम यह है कि चाहे सामने मौत भी आ जाये पर काग का माँस न खाना।"

इसके बाद आचार्यश्री ने विधिवत चारों नियमों का आजीवन पालन करने का संकल्प करा दिया। बंकचूल नियम धारण कर संतों की वंदना कर पल्ली को लौट आया। नियमों वाली बात उसने कमला को भी नहीं बताई।

मगसर बीत गया। पौष शुरू हो गया और ठण्ड काफी बढ़ गई थी। पल्ली में एक नाटक मण्डली आई। उस मण्डली ने द्रौपदी के चीर–हरण का नाटक अभिनीत किया। इस कथानक से पल्ली के लोग काफी प्रमुदित थे। सबके मन में दुर्योधन, शकुनी के प्रति क्रोध था। नाटक रात्रि के दूसरे प्रहर के बाद तक चला। नाटक की समाप्ति पर कमला और श्रीसुन्दरी सोने चली गईं। बंकचूल अपने साथियों से बातें करता रह गया। बाद में वह भी पहुँचा तो उसने देखा कि उसकी पत्नी कमला के पास कोई पुरुष लेटा है। यह दृश्य देखते ही बंकचूल का खून खौलने लगा। वह तलवार लेकर कमला के पास लेटे पुरुष का सिर धड़ से अलग करने झपटा। तभी उसे मुनि महाराज से लिये गये दूसरे नियम की याद आ गई। वह

पाँच कदम पीछे हटा, तभी तिपाई से टकराया तो तिपाई के गिरने की आवाज हुई। पुरुष वेश में भाभी कमला के पास लेटी श्रीसुन्दरी जाग गई। कमला भी उठ बैठी। श्रीसुन्दरी ने पूछाः–

"भैया क्या बात है? तुम क्या कर रहे थे?"

बंकचूल बोला – "बहिन! आज आचार्यश्री के उपदेश ने मुझे अनर्थ करने से बचा लिया, वर्ना तो मैं जीवन भर रोता रहता और कभी भी अपने को माफ नहीं कर पाता। जैन संत कितने दूरदर्शी और कृपालु होते हैं, इसे मैं अच्छी तरह से आज ही जान पाया हूँ।"

फिर बंकचूल ने लिये गये चारों नियमों की बात बहिन और पत्नी दोनों को बता दी तथा इस समय के टलने वाले अनर्थ के बारे में भी समझा दिया। श्रीसुन्दरी और कमला ने मन ही मन आचार्य धर्मप्रभ की भाव वंदना की। धन्य गुरुदेव, आपके आशीर्वाद से एक दिन सबका कल्याण होगा।

कुछ दिन बाद बंकचूल ने चन्द्रपुर नगर जाकर वहाँ के राजा क्षेमवर्धन के खजाने की चोरी का विचार किया। उसने बादल, जयन्त, कौशल और हरिभद्र चार साथियों को साथ लिया और घोड़ों पर सवार होकर चन्द्रपुर पहुँच गया। इस बार वह एक उपवन में ठहरा। इन पाँचों ने ब्राह्मणों का वेश बनाया था।

कर्म की गति बड़ी विचित्र होती है। कर्म जीव को कठपुतली की तरह नचाते हैं। मनुष्य विवश–सा नाचता चला जाता है। लेकिन हर कर्म का परिणाम, उसका बंध और शुभ–अशुभ का विचार करके आगे बढ़ने वाले बुद्धिमान कहे जाते हैं। जो बुद्धि को कुबुद्धि बना लेते हैं, वे अशुभ कर्म की सफलता को भी अपनी सफलता मानते हैं। बंकचूल को हर कठिन चोरी में सफलता मिल जाती थी। चन्द्रपुर के राजा क्षेमवर्धन के खजाने की चोरी असम्भव–सा कार्य था। इस राजा का धन भण्डार, यानी शाही खजाना राजमहल के भीतर राजा के शयनकक्ष के नीचे था। राजा क्षेमवर्धन शयनकक्ष की खिड़की में–से नीचे झाँककर देख लेता था कि खजाना सुरक्षित है। सबसे बड़ी बात यह थी कि इस खजाने को जाने वाले मार्ग और द्वार की

जानकारी राजा के सिवाय किसी को नहीं थी। जब राजा ने प्रवेश द्वार का भेद अपनी रानी और मंत्रियों तक को नहीं बताया था, तो वह भेद बंकचूल कहाँ से जानता। फिर भी उसने इस खजाने की चोरी का निर्णय किया। बादल और कौशल दोनों साथियों ने बंकचूल से कहा कि यदि चन्द्रपुर आ ही गये हैं तो किसी श्रेष्ठी की चोरी करके लौट चलो, क्योंकि राजा क्षेमवर्धन के खजाने तक पहुँचना सूर्य का स्पर्श करने के समान है। लेकिन बंकचूल ने हार नहीं मानी। उसने साथियों से कहा – "साथियों! बुद्धि से बड़ा बल कोई नहीं होता। तुम देखते जाना। मैं क्षेमवर्धन जैसे महाकृपण और महालोभी राजा के खजाने की चोरी करके ही लौटूँगा।"

पाँच ब्राह्मण उपवन में पहुँचे तो माली ने उनको प्रणाम किया। बंकचूल ने उन्हें आशीर्वाद देने के साथ पाँच स्वर्ण मुद्राएँ देकर कहा – "हम पाँचों के लिए पक्का खाना बनाओ। हम कच्चा नहीं खाते।"

"यह तो मैं जानता हूँ विप्रदेव, माली दयाराम ने कहा – "आपके लिए खीर–पूड़ी बनेगी।"

पाँच स्वर्णमुद्राएँ पाकर माली गद्‌गद् हो गया। भोजन की व्यवस्था करने वह मालिन के पास गया। उसे समझाकर पुनः ब्राह्मणों के पास आ बैठा। उत्सुकतावश माली ने इनका परिचय जानना चाहा तो बंकचूल ने बताया –

हम वेदपाठी ब्राह्मण हैं। हमने सुना है कि यहाँ के राजा के पास बहुत धन है। राजा बड़ा ही उदार और दानी है। वह ब्राह्मणों का भक्त है और ब्राह्मणों को मुँह माँगा धन देता है। इसी आशय से हम राजा से दान लेने आये हैं।"

इस पर माली दयाराम ने कहा :–

"राजा क्षेमवर्धन के पास बहुत धन है, इसमें तो कोई संदेह ही नहीं है । उसका धन भण्डार बहुत बड़ा है, यह भी सच है, लेकिन यह तो आपके साथ किसी ने मजाक किया है कि राजा क्षेमवर्धन दानी है। हे विप्रदेव! यदि खरगोश के सींग होते हों, चन्द्रमा से अग्नि बरसती हो और बन्ध्या स्त्री को प्रसव पीड़ा का अनुभव हो तो

हमारा राजा बड़ा दानी है। ऐसा कृपण और लोभी राजा तो दूसरा होगा ही नहीं। वह आपको फूटी कौड़ी भी नहीं देगा।

"यदि ऐसी बात है तो हम राजा क्षेमवर्धन को प्रसन्न कर लेंगे।" बंकचूल ने कहा – "राजा जब प्रसन्न होगा तो कुछ अवश्य देगा।"

उसके बाद और भी बातें होती रहीं। भोजन का समय हो गया तो मालिन भोजन के लिए बुलाने आई। मालिन का नाम सुन्दरी था और वह अपने नाम के अनुसार अप्सरा–सी सुन्दर भी थी। उसकी अवस्था माली से बहुत कम, यानी आधी थी। माली चालीस का और वह बीस की थी। बंकचूल ने माली दयाराम से इस अवस्था भेद का कारण कुछ घुमाकर पूछा –

"माली दयाराम! तुम्हारे कितनी संतान हैं?"

माली ने बताया :–

"हे भूदेव! यह मेरा तीसरा विवाह है। दो पत्नियाँ बिना संतान के ही मर गईं। इसके भी कोई संतान नहीं हुई। पिता बनना तो मेरे भाग्य में ही नहीं है।"

"तुम्हारे भाग्य में क्या है, इसे हम जानते हैं" बंकचूल ने कहा– "ज्योतिष विद्या भाग्य की आँख होती है। भोजन करने के बाद हम तुम दोनों का भविष्य बतायेंगे। भगवान शिव की कृपा से हमारा ज्योतिष फल कभी गलत नहीं होता।"

बंकचूल सहित पाँचों ने भोजन किया। इसके बाद बंकचूल ने सुन्दरी मालिन के बायें हाथ की रेखाएँ देखीं और बताया कि सपने में तुम दोनों को नाग दिखाई देते हैं। स्वप्न में नागदर्शन कर सुन्दरी डर जाती है। उसे सुनते ही सुन्दरी मालिन और दयाराम माली दोनों आश्चर्य से उछल पड़े। उन्होंने स्वीकार किया कि ब्राह्मण देव ने जो कुछ बताया, वह एकदम सत्य है। अपनी पहली सफलता पर बंकचूल बड़ा प्रसन्न हुआ। वह अपने मन में सोचने लगा – उपवन में ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में प्रायः सर्प निकलते रहते हैं। माली–मालिन को घास को झाड़ी में सर्प तो दिखते ही हैं, इसलिए सपने में सर्प देखना बड़ी स्वाभाविक बात है। इसी अनुमान से मैंने स्वप्न में

नागदर्शन की बात कह दी तो ये दोनों मूर्ख मुझे बहुत बड़ा ज्योतिषी समझ बैठे। फिर बंकचूल ने प्रत्यक्ष में कहाः–

"तुम पाँच ब्राह्मणों से किसी बड़े धन भण्डार का पूजन कराओ तो नाग दोष दूर हो सकता है। अगर तुम राजा क्षेमवर्धन के खजाने तक हम पाँचों ब्राह्मणों को पहुँचा दो तो हम खजाने का पूजन करके नाग दोष मिटा देंगे।

"लेकिन राजा के खजाने तक पहुँचने का मार्ग तो राजा के सिवाय कोई नहीं जानता ।" माली दयाराम ने कहा – "फिर राजा पूजन के लिए क्यों जाने देगा?"

"तो फिर इतना ही बड़ा धन भण्डार कोई दूसरा देख लो।" बंकचूल ने कहा "बहुत बड़े धन भण्डार के पूजन बिना नागदोष दूर नहीं हो सकता"

"बड़ा धन भण्डार तो राजा क्षेमवर्धन का ही है "सुन्दरी मालिन ने कहा "मेरा पिता उस भण्डार के गुप्त द्वार को जानता है।"

"फिर तो काम बन जायेगा।" बंकचूल ने कहा – "तुम अपने पिता को बुला लो। हम पाँचों ब्राह्मण राजा के धन भण्डार का बाहर बैठकर पूजन कर देंगे। फिर हमारा दावा है कि एक साल के भीतर दयाराम पिता बनेगा और सुन्दरी माँ बनेगी।"

सुन्दरी और दयाराम संतान के लिए बहुत इच्छुक थे और इन दोनों को ब्राह्मण वेशी बंकचूल पर बहुत भरोसा भी था। अतः सुन्दरी तत्काल अपने पिता नंदू को बुला लाई। सुन्दरी के पिता का नाम माली नंदराम था, पर वह नंदू नाम से जाना जाता था। पूरी बात समझने के बाद नंदू को भी लगा कि वह नाना बन जायेगा। उसने बंकचूल को बताया कि एक शिवालय में खजाने का गुप्तद्वार है, यह बात मैं बारह साल की उम्र से जानता हूँ। उस शिवालय में राजा के सिवाय कोई दूसरा जा ही नहीं सकता। राजा कभी–कभी अकेला ही शिवालय के गुप्तद्वार से अपना खजाना देखने जाता है। वैसे वह अपने शयनकक्ष के झरोखे से खजाने को देखकर तसल्ली करता रहता है। शिवालय में नटेश्वर शिव की विशाल प्रतिमा है। प्रतिमा

पीतल की है। उस प्रतिमा का बायाँ पैर ऊपर घुमाने से एक द्वार खुलता है। वही गुप्त द्वार खजाने को ले जाता है। खजाना राजा के शयनकक्ष के नीचे तहखाने के कक्ष में बना है। फिर एक दरवाजा खजाने का भी है। नंदू ने आगे बताया कि यदि राजा को पता चल गया कि आप लोगों ने खजाने का पूजन किया है तो वह सुन्दरी, दयाराम, मुझे और आप पाँचों को मरवा देगा। इतना सब जानने के बाद बंकचूल ने नंदू, दयाराम और सुन्दरी को आश्वासन दिया कि राजा को कुछ भी पता नहीं चलेगा। तुम बस शिवालय तक हमें ले चलो। हम बाजार से पूजन सामग्री ले आते हैं। नाग दोष निवारण के लिए खजाने का पूजन रात्रि को ही होगा? सो तो होगा, नंदू बोला – शिवालय के पास रात को एक चौकीदार रहता है। उसके रहते शिवालय में जाना कैसे सम्भव होगा, इस पर बंकचूल ने नंदू को समझाया कि उसकी पुत्री सुन्दरी माँ बनेगी, उसके लिए उसे इतना सहयोग तो देना ही पड़ेगा की चौकीदार को बातों में लगा ले, उससे बातें करता रहे। नंदू सहमत हो गया।

बंकचूल बाजार से पूजन सामग्री ले आया। बंकचूल, बादल, कौशल, जयन्त और हरिभद्र–चार साथियों को लेकर चन्द्रनगर आया था। उसने हरिभद्र को दयाराम के पास उपवन में यह कहकर छोड़ा कि वह पाँचों को तैयार रखेगा। जयन्त, कौशल और बादल को लेकर वह शिवालय पहुँच गया। उसने देखा कि नंदू शिवालय से हटकर चौकीदार के साथ खाट पर बैठा बातें कर रहा है। अवसर देखकर वह अपने तीनों साथियों के साथ शिवालय में प्रविष्ट हो गया और भीतर से दरवाजा बन्द कर दिया। फिर उसने नटराज के बायें पैर को ऊपर घुमाया तो गुप्त द्वार खुल गया। बंकचूल ने बादल को नटराज की प्रतिमा के पास शिवालय में छोड़ा और जयन्त तथा हरिभद्र को लेकर खजाने तक पहुँच गया। उसने बिना देर लगाये खजाने का दूसरा द्वार भी खोला और हल्की–सी प्रकाश व्यवस्था करके मूल्यवान रत्न और आभूषण पाँच थैलियों में भर लिये। तीनों तत्काल शिवालय आ गये। शिवालय में बादल था ही। रत्नाभूषणों की दो थैलियाँ बादल को पकड़ाई और एक–एक तीनों ने ले लीं।

चारों साथी तत्काल उपवन पहुँचे। वहाँ हरिभद्र पाँचों घोड़ों को लिये तैयार खड़ा था। बंकचूल ने एक नारियल सुन्दरी मालिन को देकर कहा– "यह पूजन का प्रसादी नारियल है। इसे तोड़–तोड़ कर एक महीने तक नित्य खाना। तुम एक महीने में गर्भवती हो जाओगी।"

इतना कहने के बाद बंकचूल ने पाँचों थैलियाँ घोड़ों की जीनों में छिपाई और पाँचों ब्राह्मण तत्काल चल दिये। उधर राजा क्षेमवर्धन को कुछ संदेह हुआ तो वह शिवालय आया। उसने देखा कि शिवालय का गुप्त द्वार खुला है। कारण यह था कि चलते समय बादल नटराज की प्रतिमा का बायाँ पैर नीचे करना भूल गया था, इसलिए गुप्त द्वार खुला रह गया। राजा ने तुरन्त छानबीन की तो उसे पता चल गया कि ब्राह्मणवेश में आये पाँच चोर घोड़ों पर सवार होकर भाग गये है। राजा ने पर्याप्त अश्वारोही सैनिक चोरों का पीछा करने भेज दिये। उधर बंकचूल बड़ा सावधान था। उसने जान लिया कि कुछ घुड़सवार हमारा पीछा कर रहे हैं। उसने अपने साथियों से कहा "साथियों! वन के भीतर भागो। राजमार्ग छोड़ दो। हम मारे जायेंगे।"

पाँचों चोर वनमार्ग से घोड़े दौड़ाते रहे। ये सभी लोग प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में चन्द्रनगर से चले थे। अब तक लगातार इतना मार्ग तय कर लिया कि सूर्यास्त में मात्र एक प्रहर रह गया। घोड़े बहुत थक गये थे। पाँचों चोर भी थक कर चूर हो गये थे। वे सब भूखे भी थे। बंकचूल ने एक सरोवर देखा तो साथियों से कहा :–

"अब हम राजा के घुड़सवार सैनिकों की पकड़ से बाहर है। वे लोग राजमार्ग से ही लौट जायेंगे। आज यहीं रात बितायेंगे। घोड़े बहुत थक गये हैं।"

बंकचूल के साथियों ने कहा कि वे बहुत भूखे हैं तो बंकचूल ने कहा वन से कुछ फल तोड़ लो। फलों के अलावा यहाँ कुछ नहीं मिलेगा। जयंत, बादल, हरिभद्र और कौशल ने कुछ फल तोड़ लिए। लेकिन उन फलों की जानकारी किसी को नहीं थी। बंकचूल ने अपने साथियों को समझाया कि इन अज्ञात फलों को मत खाओ। लेकिन भूख से व्याकुल साथियों ने बंकचूल की बात नहीं मानी और

फल खा लिए। बंकचूल ने मुनि धर्मप्रभ से जो चार नियम लिए थे, उनमें पहला नियम अज्ञात फल न खाने का ही था। अतः बंकचूल भूखा ही रहा, उसने फल नहीं खाये उधर बंकचूल के चारों साथी फल खाकर मर चुके थे। वे सभी फल विष फल थे। अपने साथियों के मर जाने से बंकचूल को अपार दुःख हुआ। ऐसे विश्वासी, हमदर्द और प्राणों पर खेलकर भी सरदार बंकचूल का साथ देने वाले साथियों के मरने का दुःख बंकचूल को व्याकुल कर रहा था। उसने अपने को सम्हाला। फिर आचार्य धर्मप्रभ को मन ही मन प्रणाम कर कहा कि उन्हीं की कृपा से उसके प्राण बचे है। चारों साथियों के शवों को घोड़ों पर लादकर बंकचूल सिंहगुहा आ गया। इनकी मृत्यु पर पल्ली को दुःख था। चारों का दाह संस्कार करके बंकचूल ने उन चारों के परिवारीजनों को पर्याप्त धन दिया चारों के चार स्मृति स्तम्भ भी बनवा दिये। सामान्य होने में बंकचूल को एक महीना लगा एक दिन कमला और श्रीसुन्दरी ने बंकचूल को समझाया। पहले कमला बोली – "स्वामी, आप मानें या न मानें, पर आपके साथियों की मृत्यु का कारण चोरी ही है। ये न आपके साथ चोरी करने जाते और न मारे जाते।"

"इनकी मृत्यु का कारण चोरी नहीं है प्रिये।" बंकचूल ने कहा– "चोरी करने में तो हम सफल हो गये थे और सफलतापूर्वक आ भी गये थे। इनकी मृत्यु तो विष फल खाने से हुई है। इस मृत्यु का कारण चोरी कैसे है?"

अब श्रीसुन्दरी बोली – "भैया, हम चोरी को पाप मानते हैं और आप उसे एक कला मानते हैं, यहाँ तक तो विचार भेद की बात है। पर आप स्पष्ट सत्य को मानने से इन्कार कर रहे हैं, यह समझ में नहीं आता। आपके साथियों ने आखिर विष फल क्यों खाये? चोरी के कारण ये सब पकड़े जाने से भयभीत थे। भय के कारण ही आप वनमार्ग से आये। यदि वैसे आते तो सीधे राजमार्ग से आते, तब विष फल खाने का प्रश्न ही नहीं था। मृत्यु का बाहरी कारण तो विष फल खाना है, पर मूल कारण तो चोरी करना ही है।"

बंकचूल विचार में पड़ गया और पहली बार इस सत्य को अंश रूप में स्वीकार किया कि उसके चारों साथियों की मृत्यु का मूल कारण चोरी का दुष्परिणाम ही है। फिर भी उसने चोरी छोड़ने का मन नहीं बनाया। हाँ, उसने इतना निश्चय अवश्य किया कि वह एक चोरी उज्जयिनी के राजा वीरसेन की और करेगा। उसके बाद चोरी करना छोड़ देगा।

10

एक रात कमला ने बंकचूल को जगाया। श्रीसुन्दरी सो रही थी। उसने कहा – "स्वामी! एक बात ऐसी है, जिसे मैं आपकी बहिन श्रीसुन्दरी के साथ नहीं कह सकती। वह अब सो रही है तो कुछ विशेष बात कहने आपको जगाया है।"

"ऐसी क्या विशेष बात है, जिसे तुम श्रीसुन्दरी के सामने नहीं कह सकती?" बंकचूल ने कहा – "बहिन से तो हम दोनों कोई बात नहीं छिपाते।"

"यह बात भी उससे नहीं छिपाऊँगी।" कमला ने कहा – "लेकिन उसके सामने कहने की नहीं है। स्वामी! आप मेरी पूरी बात ध्यान से सुनकर विचार करना।"

इसके बाद कमला ने कहना शुरू किया –

"स्वामी! कृतघ्नता सबसे बड़ा पाप है। आप अपनी बहिन श्रीसुन्दरी के प्रति कृतघ्न हैं। भैया–भाभी के सुख के लिए श्रीसुन्दरी ने राजवैभव और राजसुख छोड़ा इसके बदले आप उसका जीवन नष्ट करने पर तुले हुए हैं।" "आज उसे राजकुमारी के रूप में कौन जानता है? सब उसे पल्लीपति की बहिन ही जानते हैं। मेरी पहचान तो आपसे है। मुझे लोग चोरपल्ली समझे तो यह मेरा भाग्य है, पर बेटी की पहचान तो पहले उसके पिता, फिर पति से होती है।

"स्वामी! आप अपनी बहिन को कुमारी कब तक रखेंगे? उसका विवाह कब करेंगे? उसका विवाह न करना ही उसका जीवन नष्ट करना है और वही आप कर रहे हैं। इसी को मैं कृतघ्नता का पाप कहती हूँ। आप पहले पूरी बात सुन लें। स्वामी! श्रीसुन्दरी का विवाह आप किसी राजा या राजकुमार से तो कर ही नहीं सकते, क्योंकि आप युवराज की अपनी पहचान खो चुके हैं। क्या आप किसी राजा से कह पायेंगे कि मैं धनपुरी का युवराज अपनी बहिन के विवाह का नारियल लेकर आया हूँ? नहीं कह

सकते न ! आप कहेंगे मैं सिंहगुहा पल्ली का पल्लीपति, यानी सरदार बंकचूल अपनी बहिन का नारियल लेकर आया हूँ। आप जानते हैं कि यह पल्ली चोरों की पल्ली है। अब आप कहें कि अपनी बहिन का विवाह कब और कैसे करेंगे?"

पत्नी कमला की इस मीठी फटकार को बंकचूल ने सुना तो सन्न रह गया और सोचने लगा – बहिन के भावी जीवन के बारे में तो मैंने सोचा ही नहीं। कमला ने एक–एक शब्द सत्य कहा है। काफी विचार करने के बाद उसने कहा –

"प्रिये! तुमने मेरा कर्तव्य याद दिला दिया, यह तो बहुत अच्छा किया। मैं मानता हूँ कि चोरी के कारण ही मेरे चार साथी दिवंगत हुए और चोरी के कारण ही मेरी बहिन रानी बनने से वंचित है। इन दोनों दुष्परिणामों को देखकर मैं चोरी करना सदा के लिए छोड़ दूँगा। लेकिन एक और अन्तिम चोरी करने के बाद। उज्जयिनी का राजा वीरसेन बहुत वीर और साहसी है। अतः मैं उसके यहाँ की अन्तिम चोरी करके अपने चातुर्य और साहस की कसौटी देखना चाहता हूँ। इस चोरी में यदि मैं असफल भी हो गया तो भी चोरी करना छोड़ दूँगा। यदि सफल हो गया तो मैं इस पल्ली को छोड़ दूँगा और उज्जयिनी में एक अच्छे नागरिक के रूप में रहूँगा। तब मैं किसी राजा के पास पल्लीपति के रूप में नहीं, अपितु उज्जयिनी के एक नागरिक के रूप में बहिन के विवाह का नारियल लेकर जाऊँगा। हाँ, मैं अपने को युवराज तब भी नहीं बता सकूँगा, पर एक क्षत्रिय के नाते तो विवाह–प्रस्ताव लेकर जा ही सकता हूँ। मेरी बहिन का सम्बन्ध कोई भी राजा इसलिए स्वीकार कर लेगा कि मेरी बहिन अप्सरा–सी सुन्दर और सचमुच की राजकुमारी होने के कारण तेजस्विनी भी है।"

यह सुनकर कमला को हँसी आ गई और हँसकर ही उसने कहा –

"सचमुच के राजकुमार और युवराज तो आप भी हैं। आप राजवंशी हैं, इसलिए आप तेजस्वी भी हैं, पर इन सब पर आपने परदा डाल रखा है"

"जब मैं चोर नहीं रहूँगा, चोरी करना छोड़ दूँगा तो एक दिन यह परदा भी स्वतः हट जायेगा।" बंकचूल ने कहा – "समय अच्छा आया तो मुनि धर्मप्रभ से चार नियम ग्रहण किये। उन नियमों के कारण पहली बार श्री सुन्दरी का जीवन बचा तो दूसरी बार मैं प्राण गँवाने से बच गया। कौन जाने मुनि महाराज का कोई नियम यह परदा भी हटा दे। अब तुम खुशी–खुशी मुझे उज्जयिनी की चोरी करने की अनुमति दे दो।"

"अच्छा जी, तो क्या अब तक की चोरियाँ क्या आपने मेरी अनुमति से ही की थीं?" कमला फिर मुस्कराई और बोली – "यदि मैं अनुमति नहीं दूँगी तो क्या तुम मान जाओगे?"

"स्वामी! आप मुझसे वचन ले चुके हैं कि मैं और श्रीसुन्दरी आपसे चोरी छोड़ने को नहीं कहेंगी। अतः मैं यह कैसे कह सकती हूँ कि आप चोरी करने उज्जयिनी न जायें। मेरे लिए तो यह उपलब्धि बहुत बड़ी उपलब्धि है कि सफलता मिले या असफलता उज्जयिनी महाराज्य की चोरी आपकी अन्तिम चोरी है।"

इन्हीं बातों में श्रीसुन्दरी भी जाग गई। जाग कर वह भैया–भाभी के पास आ बैठी। उसने जब यह सुना कि एक और चोरी करके भैया चोरी करना छोड़ देंगे तो बड़ी खुशी हुई। उसने कहा –

"फिर तो मेरे भैया बंकचूल से पुनः **पुष्पचूल** हो जायेंगे।"

"तुम्हारी बात सत्य हो।" कमला ने कहा – "अब प्रातःकाल होने को है। प्रातःकाल नवकार मंत्र का स्मरण कर तुम उठी हो और तब अच्छी भविष्यवाणी की है। यह वाणी सत्य होगी।"

प्रातःकाल हो गया था। अतः बंकचूल, कमला और श्रीसुन्दरी नित्य कर्म में लग गये। स्नानादि से निवृत्त होकर तीनों प्राणियों ने नवकार मंत्र का जाप किया। नवकार मंत्र का जाप तीनों का नित्य नियम था। रात्रि को भी जाप करके ही तीनों सोते थे।

बंकचूल ने सागर, महाप्रभ, विक्रम को उज्जयिनी के लिए अपना साथी बनाया। चारों घोड़ों पर सवार होकर उज्जयिनी चल दिये। उज्जयिनी पहुँचकर चारों एक उपवन में ठहरे। बंकचूल ने

स्वर्णमुद्राएँ देकर माली को प्रसन्न कर लिया था। उसने अपने तीनों साथियों से कहा –

"साथियों! यह चोरी मैं अकेला करूँगा। तुम तीनों उद्यान में ही रहोगे। यह चोरी मैं राजा के खजाने की नहीं करूँगा। मैं पटरानी मदनिका के शयनकक्ष जाकर उसके आभूषण चुराऊँगा।"

"तो क्या तुम पटरानी की देह से आभूषण उतारोगे?" सागर ने कहा – "फिर तो बड़े संकट का काम है।?"

"अरे सागर, तन से आभूषण उतारना चोरी नहीं लूट या डकैती है।" बंकचूल ने कहा – "रात को पटरानी आभूषण उतारकर सोती है। आभूषणों का बोझ लिये भला वह कैसे सोयेगी। रानी अपने आभूषण उतारकर पेटी में बन्द करके पलंग के नीचे रखती है। वहीं से मैं अकेला यह चोरी करूँगा।"

"एक से अधिक होने पर तो संकट और भी ज्यादा है।" विक्रम ने कहा ' "तुम अकेले ही कर पाओगे। लेकिन पटरानी मदनिका के भवन के आस–पास पहरेदार भी तो बहुत रहते हैं जाओगे कैसे?"

"इसीलिए इस चोरी को मैं अपने साहस और सूझ–बूझ की कसौटी मानता हूँ।" बंकचूल बोला–"तुम चिन्ता मत करो। मैं सफल होकर ही रहूँगा।"

बंकचूल अपने साथियों के साथ तीन दिन तक उपवन में रहा और राजभवन की गतिविधियों का पता लगाता रहा। राजा कब किस रानी के पास सोता है? पटरानी के पास कौन–कौन सी रातें बिताता है और कभी–कभी अपने निजी शयनकक्ष में अकेला ही सोता है तो कब सोता है आदि की जानकारी करने के बाद ही बंकचूल अपने काम को अंजाम देना चाहता था। तीन दिन में उसने सब बातों का पता कर लिया और उसके बाद एक रात वह अपने काम को अंजाम देने के लिए राजभवन की ओर चल दिया।

चाँदनी रात थी। आम के पेड़ पर चढ़ने के बाद पत्तों में छिप जाने के उद्देश्य से बंकचूल ने हरी चादर ओढ़ ली। पूरे क्षेत्र का

जायजा लेने के बाद बंकचूल प्रहरियों से आँख बचाकर आम के पेड़ पर चढ़ और हरी चादर के कारण पत्तों में ऐसा मिल गया कि चाँदनी रात में भी किसी को दिखाई न दे। वैसे भी प्रहरी ऊपर पेड़ की ओर देखते ही क्यों? आम का यह पेड़ पटरानी मदनिका के शयनकक्ष की दीवार से सटा हुआ था। इस पेड़ की एक शाखा पटरानी के कक्ष की खिड़की से सटी थी। बंकचूल इसी डाल पर बैठकर शयनकक्ष के अन्दर का दृश्य देख रहा था। राजा वीरसेन ओर पटरानी मदनिका सुरापान कर रहे थे। फिर राजा ने कहा –

"प्रिये आज मैं अपने कक्ष मैं अकेला ही सोऊँगा। मुझे कुछ एकान्त चिन्तन करना है। तुम भी अब सो जाओ।"

यों कह राजा वीरसेन कक्ष से बाहर चला गया। पटरानी भी पलंग पर लेट गई। उसने सभी आभूषण उतारकर पेटी में रख दिये थे और पेटी पलंग के नीचे रख दी थी। उसके शयनकक्ष में हल्का प्रकाश था। बंकचूल डाल पर बैठा–बैठा पटरानी मदनिका के सो जाने की प्रतीक्षा कर रहा था। काफी देर बाद उसे लगा कि पटरानी सो गई है तो वह खिड़की से होकर रेशम की डोर के सहारे पटरानी के शयनकक्ष में उतर गया। बिना देर किये वह पटरानी मदनिका के पलंग के नीचे घुस गया। उसने आभूषण की पेटी का ताला खोल लिया और आभूषण अपने साथ लाई थैली में रख लिए। वह पलंग के नीचे से बाहर निकलने को ही था कि पटरानी ने करवट ली और उसका एक हाथ पलंग के नीचे लटक गया। हाथ का स्पर्श किये बिना बंकचूल का पलंग से बाहर आना असम्भव लग रहा था। उसने सोचा कि पटरानी को बेहोश करने वाली औषध सुँघा दे। लेकिन ऐसा करके वह अपने साहस को कलंकित करना नहीं चाहता था। अपनी अन्तिम चोरी में वह किसी प्रकार की युक्ति से बचने का संकल्प कर चुका था। वह यह सोच ही रहा था कि पटरानी पलंग पर बैठ गई। वह पूरी तरह जाग चुकी थी। उसने जान लिया कि उसके पलंग के नीचे कोई है। अतः उसने कहा – "जो भी है, वह बाहर आए।" बंकचूल बाहर आकर खड़ा हो गया।

"कौन हो तुम?" रानी ने पूछा – "यहाँ कैसे आये।"

"मैं एक चोर हूँ।" बंकचूल ने कहा – "चोरी करने आया हूँ।"

"लेकिन लगता नहीं कि तुम चोर हो" पटरानी ने मुस्कराकर कहा – "तुम्हारा रूप और तेज ऐसा है कि तुम चोर हो ही नहीं सकते। चोर का व्यक्तित्व इतना प्रभावी और तेजस्वी हो ही नहीं सकता।"

उधर राजा वीरसेन को नींद नहीं आई तो उसने सोचा, पटरानी के पास चलकर कुछ बातें करूँ। अपने कक्ष से निकलकर राजा वीरसेन पटरानी के कक्ष की ओर आ रहे थे कि उन्होंने पटरानी को किसी से बात करते सुना। वे ठिठक कर आगे की बात सुनने खड़े हो गये। इधर जब पटरानी ने जब यह कहा कि चोर का व्यक्तित्व इतना प्रभावी और तेजस्वी हो ही नहीं सकता तो बंकचूल बोला –

"पटरानी जी! हाथ कंगन को आरसी की क्या जरूरत है? आप प्रत्यक्ष देख रही हैं कि मैं चोरी करने आया हूँ तो चोर हूँ ही। हाँ, इतना जरूर है कि चोरी करना मेरी आर्थिक विवशता नहीं है। मैं चोरी करने को साहस और बुद्धि की कसौटी समझता हूँ।

"अब तो तुम पकड़े ही गये हो।" पटरानी ने कहा – "मैं अभी आवाज दूँगी और प्रहरी तुमको लोह जंजीरों में जकड़ लेंगे।"

मैं भी भागने वाला नहीं हूँ।" बंकचूल ने कहा – "आपके सामने खड़ा हूँ। आप आवाज देकर प्रहरियों को बुलाइये।"

"मैं ऐसा करूँगी नहीं।" पटरानी ने कहा – "मैं स्वयं को तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रही हूँ। खड़े क्यों हो, मेरी शय्या पर आओ और मुझे स्वीकार करो।"

बंकचूल को आचार्य धर्मप्रभ से लिए गये चार नियमों में से तीसरा नियम याद आ गया कि कुमारी कन्या और परनारी का स्पर्श भी नहीं करोगे। अतः उसने कहा –

"महारानी जी! आप मेरी माता के समान हैं प्रत्येक परनारी मेरी माता है। अतः मैं आपकी यह कुत्सित इच्छा कदापि पूरी नहीं कर सकता।"

"मूर्ख मत बनो।" पटरानी ने कहा – "मालव की पटरानी तुमको निमंत्रण दे रही है और तुम उसको ठुकरा रहे हो? अब देर मत करो जल्दी आओ।"

"नहीं माता, नहीं! बंचकूल ने बड़ी दृढ़ता से कहा – "आप मेरी माता हैं। मैं ऐसे पाप की कल्पना भी नहीं कर सकता कि अपनी माँ पर बदनीयत करूं ....।"

"तो फिर मेरी अवज्ञा का परिणाम भी सोच लो।" पटरानी ने क्रोध में कहा "मैं अभी चीखूँगी और तुमको अपनी इज्जत लूटने के प्रयास का अपराधी बताकर तुम्हें प्राण दण्ड दिलवाऊँगी।"

"आपको जो उचित लगे, वही कीजिए।" बंकचूल ने कहा – "मैं भागूँगा नही।"

तभी पटरानी मदनिका चिल्लाई – "बचाओ, बचाओ, यह नराध म मेरी इज्जत लूट रहा है।"

पटरानी की आवाज के साथ ही चार सशस्त्र प्रहरी कक्ष के भीतर आ गये। उनके साथ ही राजा वीरसेन भी आये। राजा वीरसेन पटरानी मदनिका और बंकचूल के संवाद का एक–एक शब्द बड़े ध्यान से सुन चुके थे। उनको देखकर पटरानी ने कहा–

"स्वामी! यह नराधम मेरी इज्जत लूटने आया था। इसने मेरा हाथ पकड़ा ही था कि मैं चिल्ला पड़ी। आज मेरा पतिव्रत्य बच गया। इस पापी को हाथी के पाँव के नीचे कुचलवा दीजिए।"

राजा वीरसेन ने बंकचूल की ओर देखकर कहा –

"तुमने ऐसा जघन्य अपराध क्यों किया?"

बंकचूल ने शान्त भाव से कहा –

"राजन्! पटरानी मदनिका के रूप–सौन्दर्य को देखकर बड़े–बड़े तपस्वी डिग सकते हैं, मैं तो फिर भी एक साधारण मानव और चोर हूँ, मुझसे नहीं रहा गया तो ऐसा नीच प्रयास कर बैठा।"

"ओह! तो तुम भी अपना अपराध स्वीकार करते हो?"

फिर उसने प्रहरियों से कहा –

"इसे कारागार ले जाओ और इसे विशिष्ट कक्ष में रखना। हम भी आ रहे हैं।"

प्रहरी बंकचूल को कारागार में ले गये। उसे ऐसे कक्ष में रखा गया था, जहाँ पराजित और बंदी राजा रखे जाते थे। इसमें एक पलंग भी पड़ा था और कक्ष साफ सुथरा था। थोड़ी देर बाद राजा भी पहुँच गया। उसने कारागार अधीक्षक से कहा –

"आप बाहर जायें और जब तक हम न कहें कोई भीतर न आये।"

इसके बाद राजा वीरसेन ने बंकचूल से कहा –

"हे भद्र! पलंग पर बैठो। खड़े क्यों हो?"

"मुझे भद्र कहकर आप लज्जित न करें।" बंकचूल ने कहा – "एक तो मैं चोर और फिर पटरानी के साथ छेड़छाड़ करने का अपराधी, फिर भी आप मुझे भद्र कहते हैं।"

"हे भद्र! तुम बैठ जाओ। यदि मेरी प्रार्थना नहीं मान सकते हो तो मैं आदेश देता हूँ कि पलंग पर बैठो। मैं भी तुम्हारे सामने ऊँचे आसन पर बैठता हूँ।"

बंकचूल पलंग पर बैठ गया और राजा वीरसेन कुर्सीनुमा एक ऊँचे आसन पर बैठे। फिर राजा ने कहा–

"मेरी प्रार्थना स्वीकार करो। मैं जो कुछ पूछूँ, उसका सही, सत्य–सत्य उत्तर देना।"

"आप मेरे कुल और वंश का परिचय मत पूछना।" बंकचूल ने कहा – "उसके अलावा आप जो भी पूछेंगे, सत्य ही कहूँगा।

"तुम्हारा नाम?"

"बंकचूल।"

"कहाँ रहते हो।"

"मैं सिंहगुहा नाम की पल्ली का सरदार हूँ और वहीं अपनी पत्नी और बहिन के साथ रहता हूँ।"

"तुम्हारी निर्भीकता और तेजस्विता से लगता है कि तुम चोर नहीं, क्षत्रिय हो।"

"आपने ठीक पहचाना। मैं क्षत्रिय ही हूँ।"

राजा वीरसेन और बंकचूल में यह संक्षिप्त वार्तालाप हुआ। थोड़ी देर दोनों ओर चुप्पी रही। फिर राजा वीरसेन ने पूछा –

"तुम्हारी जो भी बातचीत पटरानी मदनिका से हुई, वह मैंने पूरी सुनी है। तुम पूर्णतः निर्दोष हो। तुम परनारी को माता समझते हो। पटरानी ने तुमको भोग का खुला निमंत्रण दिया था। उसे ठुकराकर तुमने अपने उज्ज्वल चरित्र का रूप मुझे दिखाया था। फिर क्या कारण है कि तुमने पटरानी का आरोप स्वीकार करके स्वयं को प्राण–दण्ड का अपराधी मान लिया?"

"राजन्! मैं आपकी और पटरानी की प्रतिष्ठा बचाना चाहता था। यदि मैं आरोप स्वीकार न करता और सत्य बात कह देता तो महारानी मदनिका की कितनी बड़ी बदनामी होती? वे कहीं मुँह दिखाने लायक न रहती। वे सभी की नजरों में पतिव्रता हैं तो पतिव्रता ही बनी रहें। इसी कारण मैंने उनका आरोप स्वीकार किया था। आखिर तो मैंने उनको माता कहा था।"

"तुम बहुत महान् हो।" राजा वीरसेन ने कहा – "तुममें मानवता के साथ देवत्व भी है। मैं तुमको अपना मित्र बनाना चाहता हूँ। क्या मेरी मित्रता स्वीकार करोगे बंकचूल?"

"आपकी मित्रता मेरा सौभाग्य है।" बंकचूल ने कहा –"मैं अपने भाग्य को कैसे ठुकरा सकता हूँ।"

"तो मित्र बंकचूल! मित्र–मित्र के बीच कोई दुराव–छिपाव नहीं होता।" राजा वीरसेन ने कहा – "अब मुझे अपने बारे में सब कुछ बता दो।"

अब तो बंकचूल को सब कुछ बताना ही था। उसने अपने देश निकाले से सिंहगुहा के सरदार बनने तक की कहानी सुना दी। उसे यह भी बताया कि उज्जयिनी की चोरी उसकी अन्तिम चोरी थी। सब कुछ सुनने–जानने के बाद राजा वीरसेन ने कहा –

"आज से तुम पुनः पुष्पचूल हुए। तुम्हारे पिता धनपुरी के महाराज विमलयश को मैं व्यक्तिगत रूप से अच्छी तरह जानता हूँ। अब तुम्हारी बहन का विवाह राज–परिवार में ही होगा। अब तुम यहीं मेरे यहाँ एक महल में रहोगे। एक बात और अपनी इस अन्तिम चोरी में भी तुम सफल हुए हो, क्योंकि धन तो तुम नहीं चुरा सके, पर मेरा हृदय तुमने चुरा लिया है।"

"महाराज! मेरे तीन साथी उद्यान में ठहरे हुए हैं।" बंकचूल ने कहा – "मुझे उनके पास जाने की अनुमति दीजिए।"

"अभी नहीं।" राजा वीरसेन ने कहा – "पहले मैं पटरानी मदनिका को न्याय से संतुष्ट कर दूँ।"

उसके बाद राजा ने कारागार के अधीक्षक को बुलाकर कहा–

"अधीक्षक! ये मेरे मित्र बंकचूल हैं वैसे ये हैं तो पुष्पचूल, पर अभी मैं भी इन्हें बंकचूल ही कहूँगा। आप इनके स्नानादि की व्यवस्था कर इन्हें नये वस्त्र पहनायें। भोजन करायें और तीन घड़ी बाद इन्हें हमारे व्यक्तिगत न्याय कक्ष में ले आयें।"

राजा वीरसेन का निजी न्याय कक्ष बहुत बड़ा नहीं था। इसमें व्यक्तिगत और पारिवारिक समस्याओं के सम्बन्ध में विचार–विमर्श होता था। घरेलू अपराधों का न्याय भी होता था। एक आसन पर राजा वीरसेन और दूसरे पर बंकचूल नये वस्त्र और आभूषण पहने बैठा था। आज वह सचमुच का राजकुमार दिख रहा था। राजा के आदेश पर पटरानी मदनिका भी आ गई। कक्ष में मात्र यही तीन व्यक्ति थे। शान्त वातावरण को भंग करते हुए पटरानी मदनिका रोष में बोली –

"स्वामी! यह मैं क्या देख रही हूँ। जिसे अब तक हाथी के पैरो से कुचल जाना चाहिए था, उसे आप इतना सम्मान दे रहे हैं कि ——।"

"महारानी, होगा वही जो तुमने चाहा था।" राजा वीरसेन ने रानी को समझाया– "मरने वाले की अन्तिम इच्छा तो पूरी करनी ही चाहिए। मरने से पहले राजकुमार के वस्त्राभूषण पहनने की इसकी इच्छा थी। मैंने इसकी इच्छा पूरी की है। अब तुम मुझे

एक बार पुनः इसका अपराध तो बताओ।"

"स्वामी! वह तो मेरा तप था कि मेरा पतिव्रत्य बच गया।" पटरानी ने कहा – "यह पापी मेरी शय्या पर आया। इसने मेरा हाथ पकड़ा तो मैं जागकर चीख पड़ी। अब आप देर न करें। इसे हाथी के पैरों से कुचलवाकर मरवा दें।"

"सो तो मैं करूँगा ही।" राजा वीरसेन ने कहा –"हाथी के पैरों से कुचलवाने के पहले मैं इसका वह हाथ कटवा देना चाहता हूँ, जिस हाथ से इसने तुम्हारा हाथ पकड़ा था और इसके दोनों पैर भी कटवा दूँगा, जिनसे यह तुम्हारी शय्या पर चढ़ा था।"

"ऐसा ही कीजिए।" पटरानी ने कहा – "इसे भी तो मालूम पड़े कि एक पतिव्रता को छेड़ने का क्या फल होता है।"

"लेकिन तुमको क्या दण्ड दूँ।" राजा ने एकाएक पेंतरा बदला– "तुम तो नारी के नाम पर कलंक हो। तुमने इससे भोग याचना की, वह पूरा संवाद मैंने अपने कानों से सुना है। इधर इस महामानव की महानता देखो कि तुम्हारा और मेरा अपयश बचाने के लिए इसने तुम्हारा मनगढंत अपराध स्वीकार कर लिया।"

यह कह राजा वीरसेन ने तलवार निकाल ली और पटरानी का वध करने हेतु ऊपर उठाया। तभी बंकचूल ने राजा का हाथ पकड़कर कहा –

"हे मित्र राजन्! मैं अपनी माँ का वध आपको नहीं करने दूँगा आपको मेरी मित्रता की कसम है।"

राजा वीरसेन का हाथ ढीला हो गया। वह पुनः अपने आसन पर बैठ गया। राजा ने पटरानी से कहा–

"देखा तुमने? तुम इस निरपराध को मरवाना चाहती थी और यह तुम पापिनी को बचाना चाहता है।"

"महाराज! क्षमा से बड़ा कोई दण्ड नहीं होता।" बंकचूल ने कहा – "आप इन्हें क्षमा कर दीजिए।" क्षमा पाकर ये अपने कृत्य पर पश्चाताप करेंगी तो पश्चाताप की अग्नि में इनके समस्त दोष जल जायेंगे।"

"ठीक है, मैंने इसे क्षमा किया।" राजा वीरसेन ने कहा –"मैं इसका वध नहीं करूँगा। लेकिन इसे पटरानी के पद से हटाता हूँ और इसे अब अपने पति होने का कोई सुख भी नहीं दूँगा।"

"राजन्! क्षमा की कोई शर्त नहीं होती" बंकचूल ने कहा – "दण्ड परिवर्तन को आप क्षमा नहीं कह सकते। यदि आपने उन्हें पटरानी के पद से उतार दिया तो यह क्षमा नहीं है। उस पद से रहित होकर तो इनका अपयश फैलेगा।"

"तुम जैसा मित्र पाकर मैं धन्य हूँ, इसलिए आज मैं तुम्हारी सब बातें मानूँगा।" राजा वीरसेन बोले– "मैं इसे पूर्ववत् ही मान–सम्मान दूँगा।"

यह सुनते ही पटरानी राजा के पैरों में झुक गई। राजा ने उसके सिर पर हाथ रखा तो पटरानी पुनः बंकचूल के पैरों की ओर झुकी तो उसने अपने पैर पीछे कर लिए। फिर भी वह बोली–

"हे देव! क्षमा तो मुझे तुमसे चाहिए। तुम मानव रूप में कोई देव हो।"

"नहीं माता, मैं तो मानव भी अधम हूँ।" बंकचूल ने कहा– "कभी–कभी अधर्म का प्रभाव इतना तीव्र होता है कि अच्छे–अच्छे साधकों का भी मोह गिरा देता हैं। आप भी थोड़ी देर के लिए बहक गई थीं। स्वर्ण खण्ड नीचे गिर जाने के बाद भी पुनः स्वर्ण ही रहता है। आप पूर्ववत् महारानी हैं। मुझे देखकर आप में जो विकार आये, उसके लिए दोषी मैं भी हूँ।"

सब कुछ ठीक हो गया। बंकचूल एक रथ में बैठकर उद्यान पहुँचा। सागर, महाप्रभ और विक्रम बड़ी बैचेनी से बंकचूल की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनको आशंका थी कि बंकचूल पकड़ा गया है। बंकचूल को रथ में से उतरते देख उसके तीनों साथियों को बड़ा आश्चर्य हुआ फिर पूरी बात जानने के बाद तीनों साथी बड़े प्रसन्न हुए। लेकिन यह सुनकर अपार दुःख हुआ कि बंकचूल सिंहगुहा पल्ली में रहना छोड़कर अब उज्जयिनी रहेंगे।

बंकचूल, महाप्रभ, सागर और विक्रम कुछ दिन तक उज्जयिनी रहे। राजा वीरसेन ने बंकचूल को एक सुन्दर महल रहने को दिया था और सेवा के लिए दास–दासियाँ। कुछ दिन के बाद बंकचूल अपने साथियों को लेकर सिंहगुहा पल्ली पहुँच गया।

11

महाप्रभ, सागर, विक्रम और बंकचूल दो रथों में बैठकर उज्जयिनी से सिंहगुहा जा रहे थे। चारों ने अपने घोड़े उज्जयिनी में ही छोड़ दिये थे। सिंहगुहा पहुँचकर बंकचूल ने पत्नी कमला और बहन श्रीसुन्दरी को सभी समाचार सुनाये, पर पटरानी मदनिका के दुर्गण को नहीं सुनाया। भले लोग ऐसा ही करते हैं। फिर बंकचूल ने गाँव वालों की एक सभा की और सबसे कहा –

"साथियों! आप यह अच्छी तरह जान लीजिए कि जो आता है, वह जाता जरूर है। आने वाला एक दिन अवश्य जायेगा। आवागमन संसार की अटल नीति है। जन्म–मरण को ही आना–जाना समझो। लेकिन व्यावहारिक रूप में भी आने वाला अतिथि या प्रवासी जाने के लिए ही आता है। अतः आप लोग मुझे जाने से न रोकें। एक दिन तो मुझे जाना ही था। मैं अपनी पत्नी और बहन को लेकर उज्जयिनी जाऊँगा।

"साथियों! जैसे आपके जीवन में परिवर्तन आया था, उसी तरह मेरे जीवन में भी परिवर्तन आ चुका है। श्रद्धा का जो बीज मेरे भीतर था, वह अंकुरित हो चुका है। बीज भूमि में दबा रहता है, जब मिट्टी भरी रहती है, अनुकूल खाद, पानी मिलता है और अंकुरित होने का समय आता है तभी बीज प्रस्फुटित होता है। आज वह समय आ चुका है। जुआ, मदिरा और परस्त्री सेवन मैं बहुत पहले छोड़ चुका था। अब चोरी को भी छोड़ चुका हूँ। आपका गाँव सिंहगुहा अब एक आदर्श गाँव है। आप लोग चोरी छोड़कर खेती और पशुपालन करते हैं। अब आप धर्म को भी अपनाइये। चर्मण्यवती नदी के किनारे जो भी प्राचीन जिनचैत्य है, उपाश्रय है, वहाँ आप जाकर अपनी–अपनी रूचि के अनुसार प्रतिदिन परमात्मा के दर्शन करें। धर्म की आराधना करें तथा वहाँ श्रमण–मुनि आयें तो उनका धर्मोपदेश सुनकर अपना जीवन बदलना। मेरे बाद सागर आपका सरदार रहेगा।"

बंकचूल के जाने की बात सुनकर पल्लीवासी रोने लगे।

स्वजन के बिछुड़ने पर वियोग का दुःख होता ही है। बंकचूल ने पुनः सबको समझाया कि मैं आता–जाता रहूँगा। आप लोग भी उज्जयिनी आयें। यथा समय बंकचूल विदा हुआ। एक रथ उसने पल्ली ही छोड़ दिया और दूसरे रथ में पत्नी और बहन के साथ बैठकर उज्जयिनी पहुँचा। अपने विशाल राजमहल में एक महल राजा वीरसेन ने बंकचूल के रहने को दिया। साथ में कुछ अंगरक्षक और सेवक–सेविकाएँ दीं। बंकचूल राजसी ठाट से रहने लगा। यहाँ उसकी मैत्री जिनदास नाम के एक श्रावक से हो गई। बंकचूल, पत्नी–बहिन को लेकर जिनदास के साथ मुनियों के दर्शन करने और उनकी देशना सुनने जाता था। घर पर भी वह श्रावक जिनदास के साथ धर्म चर्चा करता था।

बंकचूल को एक नया रहस्य यह मालूम हुआ कि उसकी पत्नी कमला गर्भवती है। उसने पत्नी को उलाहना भी दिया कि इतने हर्ष का संवाद उसने उससे अब तक क्यों छिपाया। इस पर कमला ने हँसकर कहा – "अब तक मेरे जीवन में ऐसा हर्ष कभी नहीं आया था कि मैं आपको यह बात बताती। अब आप में परिवर्तन देखा तो मैं कैसे छिपाती!"

बंकचूल ने हँसकर कहा– "यह भी उस भाग्यशाली पुण्यवान जीवन के शुभ आगमन का ही फल समझो।"

उधर पटरानी मदनिका ने आयंबिल तप करके अपने दुर्भाव का प्रायश्चित्त किया। जैसे मिट्टी में लिपटा सोना आग में तपकर दमकता हुआ कुंदन बन जाता है, उसी प्रकार पश्चाताप की आग में तप कर पटरानी मदनिका निर्मल चरित्र सन्नारी बन गई थी। बंकचूल ने राजा वीरसेन से अनुरोध किया कि वे उसे पूर्व की भाँति प्यार करने लगें तो राजा ने कहा – "मेरे मन में पटरानी के विश्वासघात की कचोट अब भी है।"

"हृदय से क्षमा करना ही तो सच्ची क्षमा है।" बंकचूल ने कहा–"आप बुरे स्वप्न की भाँति सब कुछ भूलकर महारानी से पूर्ववत् प्यार करेंगे, तभी मेरी मित्रता सार्थक होगी।"

"तो फिर मेरी मित्रता भी तभी सार्थक होगी, जब तुम मुझे धनपुरी के महाराज विमलयश को पत्र लिखने दोगे।" राजा वीरसेन ने कहा – "अब तक मैं तुम्हारी बात मानता रहा, पर अब तुम भी मेरी बात मानो।"

"बंकचूल ने अनुमति दे दी। राजा वीरसेन मदनिका के कक्ष में रहने लगे। उन्होंने धनपुरी के राजा विमलयश को एक बड़ा पत्र लिखकर दूत के हाथ भेजा। पत्र में विस्तार से सब समाचार लिखे। उन्होंने लिखा कि **बंक, यानी टेढ़ा** चलने वाला **पुष्पचूल,** बंकचूल बन गया था। अब वह पुनः **पुष्पचूल** बन गया है। पुष्प की तरह उसका जीवन सद्‌गुणों की सुगंध से महक उठा है। पुष्पचूल ने सारे दुर्गुण त्याग दिये हैं और वह श्रेष्ठ श्रावक और धर्मपुरुष बना है। यह भी लिखा कि आप, यानी महाराज विमलयश दादा बनने वाले हैं।"

जब राजा वीरसेन पूरा पत्र लिखकर दूत को धनपुरी भेजने वाले थे, तभी महारानी मदनिका ने उन्हें रोका और कहा –

"दूत को अभी एक सप्ताह तक धनपुरी मत भेजिये।"

महारानी मदनिका वत्स देश की राजकुमारी थी। उनका छोटा भाई अभयमित्र वत्स देश का युवराज था। महारानी मदनिका चाहती थी कि बंकचूल की बहन श्रीसुन्दरी का विवाह युवराज अभयमित्र के साथ हो। उन्होंने दूत भेजकर युवराज अभयमित्र को उज्जयिनी बुला लिया। कमला, श्रीसुन्दरी और बंकचूल ने यह विवाह सहर्ष स्वीकार किया। श्रीसुन्दरी का वाग्दान, अभयमित्र के साथ पक्का हो गया। इसके बाद राजा वीरसेन ने अपने पत्र में यह भी लिखा कि श्रीसुन्दरी का वाग्दान वत्स देश के युवराज अभयमित्र के साथ पक्का हो गया है, लेकिन उसका विवाह धनपुरी में ही होगा।

राजा वीरसेन का पत्र पाकर महाराज विमलयश और महारानी देवदत्ता ऐसे हर्षित हुए जैसे सूखी खेती जल पाकर हरी–भरी हो जाती है अथवा सूखे तालाब में दम तोड़ती मछलियाँ पानी पाकर पुनः जी उठती हैं। पूरी धनपुरी नगरी में यह संवाद फैल गया कि

बंकचूल का जीवन एकदम बदल गया है।

समय गुजर रहा था। यथा समय कमला ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया उसका नाम सुदर्शन कुमार रखा गया था। कुछ ही दिनों बाद बंकचूल बीमार पड़ गया। उसके पूरी देह में असह्य वेदना होती थी। राज वैद्य उसकी चिकित्सा कर रहे थे। बंकचूल को रह–रहकर असह्य वेदना का दौरा पड़ता था। लेकिन बंकचूल की सहनशीलता भी गजब की थी। वह न चीखता, न चिल्लाता और प्राणलेवा दर्द को सहन कर लेता। महाराज वीरसेन ने धनपुरी को पुनः संदेश भेजा कि महाराज विमलयश पितामह बन गये है। उनके पौत्र का नाम सुदर्शन कुमार है। इन दिनों बंकचूल रोग शय्या पर है। चिन्ता की कोई बात नहीं है। राजवैद्य की चिकित्सा हो रही है।

बंकचूल के भयंकर दर्द का कोई निदान राजवैद्य नहीं कर पाये। आयुर्वेद की विधि और सिद्धान्तों से रोग–परीक्षण के बाद भी राजवैद्य ने पाया कि बंकचूल पूर्ण स्वस्थ है। अतः दर्द का कोई कारण समझ में नहीं आता। वैद्य की दवा से बंकचूल को रात में नींद आ जाती, पर जब भी दर्द का दौरा पड़ता वह व्याकुल हो जाता। एक दिन बंकचूल ने बहन और पत्नी को बुलाकर कहा–

"मैंने आप दोनों को बहुत सताया है। मुझे क्षमा कर देना। सुदर्शन कुमार का ध्यान रखना। यह दर्द मेरे प्राण लेकर ही जायेगा।

"आप ऐसी बातें क्यों करते हैं?" कमला ने कहा – "आप ठीक हो जायेंगे।"

यह कहने के बाद कमला चुप–चुप रोने लगी। श्रीसुन्दरी भी रो रही थी। महाराज वीरसेन और महारानी मदनिका भी बहुत दुःखी थे। उन्होंने राजवैद्य के अतिरिक्त नगर के अन्य गुणी वैद्यों को भी बुलाया पर दर्द का कारण और निवारण कोई भी वैद्य नहीं खोज पाया। फिर एक दिन एक वयोवृद्ध ने वेदना का निदान किया–

"इस भयंकर दर्द के रोग का नाम 'कागविषगद' (कौए के जहर का रोग) है। जंगलों में किंपाक नाम का एक विष वृक्ष होता है। उस वृक्ष के किंपाक फल के विष की गंध इतनी तीव्र होती है कि कोई पक्षी इस वृक्ष के पास भी नहीं आता, फल खाने की बात तो दूर रही। कभी – कभी लाख्यों कागों में कोई अभागा काग इस फल मे अपनी चोंच मारता है जो चोंच मारते ही वह दूर हट जाता है। लेकिन विष के प्रभाव से कौए की गर्दन एकदम काली पड़ जाती है। चोंच की जलन से व्याकुल काग किसी जलाशय का पानी पीता है तो वह पानी भी विषयुक्त हो जाता है। चार–छह दिन में कौआ तो मर जाता है, पर उसका पिया हुआ जलाशय का जल जो भी पी लेता है, उसे इसी तरह का असह्य दर्द होता है। इसी दर्द को 'कागविषगद' कहते हैं।"

वैद्य ने पूछा "क्या आपने कभी इस जलाशय का पानी पीया था।"

बंकचूल बोला "मुझे याद आया; कुछ समय पहले ही मैं एक दिन चर्मण्यवती नदी के उस पार जंगलों से आ रहा था। धूप बहुत तेज थी, जोरों की प्यास लगी थी, एक घड़े में से दो घूँट जल लिया और मैंने पानी पीया। पानी बहुत कड़वा था, इसलिए मैंने एक ही घूँट पीया, दूसरी घूँट जो थूक दी, हो सकता है, वही विषाक्त जल मेरी व्याधि का कारण बना हो।"

"रोग का निदान तो हो गया।" राजा वीरसेन ने आतुर होकर पूछा "क्या इस रोग की कोई सफल चिकित्सा नहीं है?"

"है, अवश्य है।" वयोवृद्ध वैद्य ने कहा –"गुरुमुख से मैंने जाना है कि कभी–कभी विष की औषध विष ही होती है। ***विषस्य विष मौषधम्*** – साँप के जहर से ही साँप का जहर उतारने की दवा बनती है। उसी प्रकार इस रोग की दवा काग भोग है। रोगी यदि कौए का कच्चा माँस खाये तो निश्चय ही रोग मुक्त होगा। ऐसा हमारे वृद्ध वैद्यों का कथन है।"

यह संवाद बंकचूल ने सुना तो उसने कहा –

"आचार्य धर्मप्रभ से मैंने जो चार नियम लिए थे, उनमें यह भी है कि चाहे प्राण चले जायें, पर काग का माँस न खाना। मुनि महाराज द्वारा दिलाये गये तीन नियमों का परीक्षण तो मैं कर चुका। एक नियम पालन से श्रीसुन्दरी के प्राण बचे, एक से मेरे प्राण बचे और तीसरे नियम पालन से मुझे महाराज वीरसेन की मित्रता प्राप्त हुई। मैं अब इस चौथे को भी भंग नहीं करूँगा।"

मेरे शुभ चिन्तको, मरण तो निश्चित समय पर होता ही है। यदि मेरा जीवन शेष है तो साक्षात् मृत्यु आकर भी लौट जायेगी और यदि मरना ही है तो अमृत घट पीने पर भी मैं नहीं बचूँगा। मैं प्राण देने को तैयार हूँ, पर काग का माँस नहीं खाऊँगा।"

बंकचूल को महारानी मदनिका, कमला, श्रीसुन्दरी और राजा वीरसेन सभी ने समझाया कि आपद धर्म में किया गया माँस भक्षण पाप नहीं होता, पर बंकचूल अपने नियम पर दृढ़ रहा। तब कमला ने सलाह दी कि नगर के ज्ञानी श्रावक जिनदास को बुला लें, वे ही उनको समझा सकते हैं। जिनदास के पास सूचना भेज दी गई। वह उपाश्रय में सामायिक करके सीधा चल पड़ा। वह जब आ रहा था तो मार्ग मे अशोक वृक्ष पर बैठी दो देवांगनाएँ उसे मिलीं। वे रो रही थीं जिनदास ने उनका परिचय पूछा, सुन्दरी आप कौन हैं? और क्यों रो रही हैं?

देवांगनाओं ने बताया – "हम स्वर्ग की अप्सराएँ हैं, हमने सुना है, दृढ़ प्रतिज्ञ राजा बंकचूल अपने नियम पालन में अडिग है। वह मरकर स्वर्ग में आने वाला है। हमारा स्वामी बनेगा, हम उनके स्वागत के लिए यहाँ आई थीं। परन्तु अब आप उसको नियम भंग कराकर काग माँस खिलाने जा रहे हैं, तो वह नियम तोड देगा। स्वर्ग से भी वंचित हो जायेगा। हम भी अपने स्वामी को नहीं पा सकेंगी, इसी कारण रो रही हैं।"

जिनदास ने कहा – "क्या मेरे मित्र की मृत्यु निश्चित है। यदि वह काग माँस खा ले तब।"

देवांगना – "तब भी मृत्यु नहीं टलेगी...।"

देवांगनाओं से बातें करके जिनदास वीरसेन के राजमहल पहुँचा। वहाँ बंचकूल की शय्या के पास गया। सभी परिजन भी वहीं थे। जिनदास ने कहा –

"मित्र! धर्म से बड़ा जीवन नहीं होता। तुम्हारे नियम की दृढ़ता से मैं प्रसन्न हूँ। मुझे क्या करना है, सो कहो।"

"तुम मेरी अन्तिम इच्छा पूरी करो।" बंकचूल ने कहा – "मुझे धर्म की शरण दिलाओ। मैं 'पचक्खाण' की विधि नहीं जानता। मैंने बड़े पाप किये हैं। मैं अब सभी से वैराग्य लेकर धर्म की शरण चाहता हूँ।"

"जैसे सूर्य के सामने अँधेरा नहीं रहता, वैसे ही धर्म पापों को जला देता है।" जिनदास ने कहा – "तुम्हारे पाप भी जलेंगे। तुम्हारे भीतर श्रद्धा के बीज का जो अंकुरण हो चुका है, वह पौधा बन गया है और अब वृक्ष बनकर फलेगा।"

जिनदास ने विधिवत् धर्म की आराधना करवाई। पापों का प्रायश्चित्त कराया और धर्म की शरण दिलाई। बंकचूल नवकार मंत्र का सतत् जाप करता रहा और उसने धर्म की शरण लेकर प्राण त्यागे। हा–हा कार मच गया। कमला और श्रीसुन्दरी का रोना किसी से देखा नहीं जा रहा था। सभी को सान्त्वना देकर जिनदास चला गया। मार्ग में वहीं देवांगनाएँ उसे पुनः रोते हुए मिलीं। जिनदास ने रोने का कारण पूछा तो दोनों ने बताया–

"क्योंकि अब बंकचूल बहुत महान् ऋद्धि सम्पन्न देव बन गया। वह सौधर्म देवलोक का स्वामी हुआ है, अब वहाँ हमें कौन पूछेगा।, हमने अपना स्वामी खो दिया, इसलिए हम रो रहीं है।।"

सुनते ही जिनदास गद्‌गद हो गया उसने देखा कि भीतर श्रद्धा ही न हो तो कुछ नहीं हो सकता। बंकचूल के भीतर श्रद्धा का बीज था तो उसका फल उसे मिल गया। यही जीव देवभव पूरा करके पुनः मानव बनकर श्रमण धर्म का पालन करके मोक्ष भी पायेगा।